चन्दामामा
अक्टूबर १९६१
50

WITH AN EXPERIENCE OF
OVER 25 YEARS

गृहिणी का
अतिथि-सत्कार...
अभी-अभी नाश्ते के समय ये लोग इन से मिलने आ गये थे, लेकिन इन के पास तत्काल कोई ऐसी सामग्री नजर नहीं आ रही थी, जिससे वह अपने अतिथियों का स्वागत कर सकती...खैर, इन के पतिदेव ने इन्हें धीरे से कुछ कहा।
वह रसोई घर में चली गयी और ट्रे भरकर साठे बिस्कुट ले आयी। सचमुच साठे के स्वादिष्ट ऑरेंज क्रीम, लज्जतदार तरोताजा माल्टेक्स, धुसबरी और विशेषतया सस्ते सॉल्टेक्स जैसे बेहतरीन नाश्तेने आज गृहिणी की प्रतिष्ठा रख ली।
IS:1011
ISI
साठे बिस्कुट
साठे बिस्कुट एण्ड चॉकलेट कं. लि., पूना-२.

अक्टूबर १९६१

★

विषय - सूची

★

एक प्रति ५० नये पैसे वार्षिक चन्दा रु. ६-००

अक्टूबर १९६१

जो पत्रिका हमारा पूर्ण रूप से मनोरंजन करती वह पत्रिका लोकप्रिय होती है और चन्दामामा हमें काफी हद तक मनोरंजन पहुँचाती है, इसलिए वह काफी लोकप्रिय है। चन्दामामा हमारी मनोरंजन की हर माँग को पूरा करती है। इसलिए मैं चन्दामामा की नियमित ग्राहिका हूँ।

गिरिजा गावसिंहका, कलकत्ता

मैं विगत पाँच वर्षों से चन्दामामा पढ़ता आ रहा हूँ। मेरी राय में चन्दामामा भारत की सर्वश्रेष्ठ पत्रिका है। जब मैं चन्दामामा के मुखपृष्ठ में लिखित माँ बच्चों का मासिक पत्र पढ़ता हूँ; कारण यह है कि जब मैं बड़ा हो जाऊँगा तो इस सुख से वंचित रह जाऊँगा। अच्छा हो यदि आप इसे पुरुषों का भी मासिक पत्र कर दें।

दिगम्बर सदाशिव हड़प, जबलपुर

इस पत्र द्वारा मैं अपना यह विचार प्रकट करना चाहता हूँ कि जिस प्रकार "सिंदबाद की यात्रायें" "गलिवर की यात्रायें" आदि प्रकाशित हुई थीं, यदि उसी प्रकार "राबिन्सन क्रूसो" को भी "चन्दामामा" में प्रकाशित किया जाये तो यह मनोरंजक एवं उपयोगी होगा।

डी. आर. अहूजा, लखनऊ

चन्दमामा को देखकर बच्चे खाना पीना भूल जाते हैं पता नहीं यह कौन-सी जादू की किताब है कि इसे देखते न भूख लगती है ना प्यास। पता नहीं इस में कौन-सा आकर्षण है। यह बड़ी शिक्षाप्रद पत्रिका है।

सुभाष भटिया, रोहतक

हम आपकी पत्रिका चन्दामामा के पिछले कई वर्षों से नियमित पाठक हैं। इसकी रोचक कहानियों ने, सुन्दर व रंगीन चित्रों ने एवं ओजस्वी धारावाहिकों ने हम सबका मन मोह लिया है। इसकी प्रतीक्षा हम बड़ी बेचैनी से करते हैं। यह सारे भारत में अपने ढंग की अनोखी पत्रिका है। काश आप इसे साप्ताहिक कर पाते।

अशोक कुमार सिन्हा, नीमच

आप को मालूम हो की मैं और घर के सभी इस चन्दामामा को सात दिन में पढ़ लेते हैं, अगर आप कृपा करके चन्दामामा मासिक हटा करके साप्ताहिक कर दे तो अच्छा है और आप दस-बस को एक साथ छाप दे तो अच्छा होगा।

नरेन्द्र कुमार जैन, बीकानेर

"आज से नहीं वरन् पिछले आठ वर्षों से मैं 'चन्दामामा' के प्रेमियों में से हूं। किसी न किसी प्रकार मैं 'चन्दामामा' पढ़ने के लिए समय निकाल ही लेता हूं, चाहे कितना ही व्यस्त प्रोग्राम क्यों न हो। कारण यही है कि कहानियाँ इतनी मनोरंजक और शिक्षाप्रद होती हैं कि उन्हें मैं ही क्या, सभी पढ़ना पसंद करते हैं। धारावाहिक उपन्यास तो बहुत ही अच्छे होते हैं इसीलिए सर्वप्रथम मैं धारावाहिक उपन्यास ही पढ़ता हूं। आप इसे साप्ताहिक कर दें तो बड़ा ही अच्छा होगा।"

तौसीफ़ ए. शरफ़ानी, रामपुर

आपका सितम्बर अंक पाकर हमें बड़ी खुशी हुई। आपकी नई कहानी भयंकर घाटी आरम्भ से ही बड़ी रुचिकर है। मैं आपकी मासिक पत्रिका चन्दामामा की प्रशंसा किये रह नहीं पाती। इसकी धारावाहिक कहानियाँ और चित्र बहुत ही सुन्दर होते हैं और फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता तो उत्सुकता का कारण बन जाती है।

कु. इक़बाल कौर, करनाल

'आप हैं एक बिगड़े हुए नवाब ...'

'मेरे पतिदेव एक बिगड़े हुए नवाब से कम नहीं,' डी/८, यूनियन हाउस, माहिम, बम्बई १६ की श्रीमती आर. आर. प्रभु कहती हैं, 'और कपड़े की धुलाई पर तो इन का माथा मैला होते देर नहीं लगती। लेकिन जब से इन के कपड़े मैं ने सनलाइट से धोने शुरू किये हैं, वह भी खुश हैं और मैं भी। सनलाइट से कपड़े शानदार सफ़ेद और उजले धुलते हैं और इस का ढेरों झाग मैल का कण कण बहा ले जाता है!

बुद्धिमती जानती है कि शुद्ध, मुलायम झागवाले सनलाइट की धुलाई में इन के कपड़ों की भलाई है। आप भी इस से सहमत हो जायेंगी।

इ. 30-X29 HI

हिंदुस्तान लीवर का उत्पादन

जरा-सा **अमृतांजन**

आपको तुरन्त
आराम पहुंचायेगा

सर्दी-खाँसी, बुखार और गठियावात की तकलीफों से अपने परिवार को बचाइए। जरा-सा **अमृतांजन** तकलीफ मिटाने के लिए काफी है इसलिए एक शीशी महीनों चलती है।

अमृतांजन लिमिटेड, मद्रास-४
इसके अलावा बम्बई-१, कलकत्ता-१ और नई दिल्ली-१

AMRUTANJAN
Pain Balm

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

कई पाठक प्रायः लिखते हैं कि "चन्दामामा" के वर्ष में कई विशेषांक निकलने चाहिये। हम भी चाहते हैं कि निकालें। पर परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि हमारे लिए सम्प्रति यह सम्भव नहीं है। प्रायः जुलाई में हम "चन्दामामा" का वार्षिक अंक प्रकाशित करते थे। इस वर्ष वह भी न कर सके। आपको मालूम हो कि "चन्दामामा" विदेशों से मँगाये गये, बढ़िया कागज़ पर छपता है। विदेश से उतनी मात्रा में कागज नहीं मँगाया जा सकता, जितनी कि हमें आवश्यकता है और बिना कागज के विशेषांक न मुद्रित किये जा सकते हैं, न प्रकाशित ही। जब कागज़ आसानी से मिलने लगेगा तब हम अवश्य विशेषांक अधिक संख्या में निकालेंगे। हम अपनी ओर से पाठकों को शिक्षाप्रद, मनोरंजक कथा-साहित्य देने का पूरा प्रयत्न कर रहे हैं।

वर्ष : १३ अक्टूबर १९६१ अंक : २

सन्देह निवारण

गोल मटोल भीम के गाँव में एक धनी रहा करता था। वह खाने-पीने का बड़ा शौकीन था। उसके पास बहुत-सा धन था और परिवार न था। इसलिए उसने एक रसोइया रख रखा था। वह उससे तरह तरह के पकवान बनवाकर खाया करता। तीन बार पेट-भर कर खाना खाता और सोता, इसके सिवाय उसे और कोई काम न था।

जल्दी ही रसोइये ने भी इतना खाया पिया कि वह मुटिया गया। उसे भी आलस्य की आदत हो गई। इसलिए उसने काम करने के लिए एक और आदमी को रखवाने का निश्चय किया।

एक दिन उसने नानी के घर आकर कहा—"मैं फलाने के घर रसोइया का काम कर रहा हूँ। ऊपर का काम करने के लिए एक लड़का चाहिए। सुना है, आपके घर कोई है। क्या वह काम पर आयेगा?"

नानी ने गोल मटोल भीम को बुलाकर पूछा—"क्या रईस के घर काम करने के लिए जाओगे?" गोल मटोल भीम मान गया। रसोइया उसको साथ ले गया।

धनी दुपहर का भोजन करके सोया करता था। तीन बजे तक फिर उसके खान पान के लिए कुछ तैयार रखना होता था। जब रसोइया खाने की चीज़ें लाकर उनकी बगल में रखता तो वह उठता और खाकर फिर सो जाता।

कभी-कभी फिर थोड़ी देर बाद उठकर पूछता—"अरे भाई, खाने की चीज़ें कहाँ है? कहाँ हैं दूध वगैरह?" क्योंकि वह सोता सोता खा लेता था इसलिए उसे याद नहीं रहता।

"अभी तो आपने खाया था!" रसोइया कहता और जब तक उसको झूटन और झूटे बर्तन न दिखा देता, तब तक उसे विश्वास न होता। क्योंकि मालिक की यह आदत थी इसलिए रसोइया उसके झूटे बर्तन वगैरह, उसके पलंग के पास ही छोड़ देता था।

इस तरह कुछ दिन गुज़र जाने के बाद रसोइये ने एक चाल चलने की सोची। क्योंकि वह भी मुटिया रहा था, इसलिए खाने की चीज़ें बनाने में वह अलस दिखाता। इसलिए वह झूटे बर्तन मालिक के पास छोड़ देता और मालिक के होठों पर शकर और घी मिलाकर लगा देता और हाथ पर हाथ रखकर बैठा रहता।

जब मालिक उठकर चिल्लाता—"खाने की चीज़ें, दूध।" तो रसोइया चिल्लाता—"अभी तो आपने खायी थीं।" मालिक झूटे बर्तन देखता और होंठ चाटता और फिर सो जाता।

रसोइया का यह धोखा कई दिनों से चला आ रहा था।

जिस दिन गोल मटोल भीम नौकरी पर आया, उस दिन रसोइये ने कुछ न बनाया, उसकी मर्ज़ी ही न हुई। उसने कुछ झूटे बर्तन उठाकर, गोलमटोल भीम से कहा—"ये थाली, लोटा वगैरह मालिक के पलंग के पास रख आ। शकर और घी ले जाकर, मालिक के होठों पर लगा देना। वह खुर्राटे मार कर सो रहे हैं। कोई डर नहीं है। वे नहीं उठेंगे।"

"अच्छा," भीम ने जाकर, वे बर्तन मालिक के पलंग के पास की छोटी मेज़ पर रख दिये। पर उसे न सूझा कि कैसे शकर और घी मालिक के होठों पर लगाये। रसोइये ने कहा था कि ऊपर के होठ पर

लगाने के लिए। पर वहाँ बड़ी बड़ी मूँछे थीं। मूँछों के ऊपर नाक थी। मूँछों पर लगाया जाय या नाक पर! यदि रसोई घर में जाकर रसोइये से पूछता हूँ, तो वह नाराज़ होगा। क्या किया जाय?

इसलिए भीम ने मालिक को उठाया—"इसे, रसोइये ने आपके होठों पर लगाने के लिए कहा है। मूँछों पर लगाऊँ या नाक पर!"

मालिक नींद की खुमारी से उठा।

"क्या लगाना है! खाने पीने की चीज़ें कहाँ हैं!" उसने पूछा।

"खाने की चीज़ें नहीं हैं। इसलिए इन बर्तनों को झूटा करके यहाँ रखा है। रसोइये ने इस घी और शक्कर को आपके होठों पर लगाने के लिए कहा है। होठों पर मूँछे हैं। मूँछो के ऊपर नाक है। मुझे यह नहीं सूझ रहा है कि इसे मूँछों पर लगाऊँ, या नाक पर!" भीम ने कहा।

"यह सब क्या है! मुझे कुछ नहीं समझ में आ रहा है। खाने की चीज़ें क्यों नहीं बनाई गईं! झूटे बर्तनों को पलंग के पास क्यों रखा गया!" मालिक ने खिझकर पूछा।

"हुज़ूर, आप सोकर जब उठें, तो ये थाल वगैरह दिखाकर रसोइये ने मुझ से कहने के लिए कहा था कि आप खा चुके हैं।" भीम ने कहा। उसे न मालूम था कि मामला इतना उलझेगा।

मालिक जान गया कि रसोइया उसे प्रायः यों धोखा दे रहा था। उसने रसोइये और गोल मटोल भीम को बड़ी गालियाँ सुनाईं। फिर रसोइये ने गोल मटोल भीम को खूब पीट पाटकर काम से निकाल दिया। गोल मटोल भीम अपनी किस्मत को रोता अपने घर चला गया।

तृतीय अध्याय

दक्ष विराजित थे आसन पर
उन्नत दीपित भाल,
अग्निकुण्ड से निकल रही थी
रह रह भीषण ज्वाल ।

कोटि कोटि मुनि-देव-विप्रगण
देख रहे थे यज्ञ,
नहीं वहाँ थे केवल शिव ही
परमेश्वर सर्वज्ञ ।

हलचल सहसा इसी समय सुन
चौंके मुनि औ' देव,
कई कई कण्ठों से निकला—
बोल, जय महादेव !

तत्क्षण आयी सती वहाँ पर
धीरे-धीरे मौन,
साथ उन्हीं के शिव गण आये
समझ गये सब 'कौन'।

यज्ञस्थल पर देख सती को
हुए चकित सब लोग,
कानाफूसी लगे वहाँ पर
करने सारे लोग ।

कभी दक्ष औ' कभी सती पर
करते दृष्टि निपात,
कुशल-क्षेम की नहीं किसी ने
पूछी कोई बात ।

बेटी का यों देख आगमन
माता दौड़ी आयी,
लगा लिया छाती से उसको
आँखें भर-भर आयीं ।

माँ-बेटी का मिलन देख यह
सबका रोआँ पुलका,
किंतु पिता था दक्ष कि ऐसा
गुस्सा उसका भड़का ।

"भारतीभक्त"

पति का गुस्सा देख सती की
माता भीत हुई,
पुत्री को छोड़ अलग जा
व्याकुल खड़ी हुई।

बहनें भी थीं जो सब आयीं
'दीदी दीदी' कहती,
वे भी भागीं उलटे पाँवों
पितृ कोप से डरती।

रंग-ढंग यों देख वहाँ का
सती हुई अति खिन्न,
सोचा था क्या पहले उसने
पाया बिलकुल भिन्न।

फिर भी जोड़े हाथ बढ़ी वह
पिता दक्ष की ओर,
किन्तु दक्ष ने फेर लिया मुख
तुरत दूसरी ओर।

भर आये आँखों में आँसू
हुई सती को ग्लानि,
पति की बात काट थी आयी
हुई इसी से हानि।

फिर देखा इसने मुनियों को
करते मन्त्रोच्चार,
नहीं यहाँ कोई करता था
शिव का नामोच्चार।

सह न सकी वह अपने पति का
देख वहाँ अपमान,
यह हृदय को छेद गया कुछ
बिच्छू-डंक समान।

दक्ष उधर था मुख फेरे औ'
सती क्रोध से लाल,
स्तम्भित थी सभा देख यह
उन दोनों का हाल।

बोली सती—"पिता आप हैं
करती प्रथम प्रणाम,
किन्तु आप भी भोगेंगे निज
करनी का परिणाम।

शिव के बिना यज्ञ यह कैसा
समझा है क्या खेल!
पतन-गर्त की ओर रहे हैं
खुद को आप ढकेल!"

देख उसीकी ओर बिना ही
कहा दक्ष ने खीझ—
"बन्द करो यह बक-बक अपनी
दो मत मुझको सीख!

शिव को नहीं कभी है रहता
मर्यादा का ध्यान,
ऐसे अभिमानी का जग में
कौन करे सम्मान।

करता हूँ मैं अपने मन की
खोलो तुम न जबान,
चली यहाँ से जाओ झटपट
रखना है यदि मान!"

सुनते ही यह शिवगण सारे
गरजे होकर क्रुद्ध,
किया सती ने शान्त उन्हें, थी
यद्यपि वह भी क्षुब्ध।

फिर बोली वह कड़क पिता से—
"पापी! है धिक्कार!
शिव पर दोष लगानेवाला
होगा ही मक्कार।

जीभ तुम्हारी काट गिराती
किंतु पिता हो हाय!
देती हूँ अब तुम्हें शाप ही
भोगो फल निरुपाय।

ध्वंस तुम्हारा यज्ञ अभी हो
और गर्व हो चूर,
सारे पापों का तुमको अब
दण्ड मिलेगा ही भरपूर!"

इस प्रकार दे शाप तुरत ही
उत्तर दिक की ओर,
बैठ गयी वह ध्यान लगाकर
सबका जी झकझोर।

फिर तो उसके तन से सहसा
लपटें उठीं विशाल,
मोम समान लगी वह जलने
हुई आग-सी लाल।

स्वाहा के स्वर गूँज रहे थे
अब था हाहाकार,
बनी राख झट सत्य-तेज की
प्रतिमा वह साकार।

शिव के गण चिल्लाये सारे
होकर क्रुद्ध अधीर—
"कहाँ दक्ष है? मारो, पकड़ो!"
दौड़े सारे वीर।

डर के मारे दक्ष उसी क्षण
भागा लेकर जान,
भृगु के पीछे छिपा भागकर
कायर दीन समान।

भृगु ने करके होम उसी क्षण
किया मंत्र-आह्वान,
अग्नि-अस्त्र ले निकले सैनिक
तत्क्षण काल समान।

शिव के सभी गणों से फिर तो
मचा घोर संग्राम,
यज्ञभूमि पट गयी लहू से
सहसा तभी तमाम।

दर्शकगण में बेचैनी थी
मचा बहुत कुहराम,
बीत चला दिन इसी युद्ध में
आ धमकी तब शाम।

शिव के सभी गणों के आखिर
उखड़ चले जब पैर,
भागे वे सब समर विमुख हो
मना जान की खैर।

रुका युद्ध यों औ' नारद भी
चले यहाँ से शीघ्र,
'नारायण नारायण' कहते
बेचैनी से तीव्र!

[३]

[केशव के पशुओं में जो विचित्र जन्तु आ मिला था, उसने ब्रह्मपुर के सेनापति और उसके सैनिकों को मार दिया। जो दूसरा सैनिक बच गया था वह नगर में भाग गया। नगर में तरह तरह की अफ़वाहें उड़ने लगीं ये अफ़वाहें सुनकर केशव का पिता जंगल में आया और अपने लड़के से उसने सब कुछ कहा।]

पिता की बात सुनकर केशव चौंक पड़ा। उसने पास ही चरते हुए विचित्र पशु की ओर आश्चर्य से देखते हुए कहा—"अब मुझे सब समझ में आ गया है। जिस पशु के बारे में मैंने रात को बताया था वह यही है। उसके सींग की ओर देखो, कितना खून उस पर जम गया है।"

बूढ़ा इतनी देर लड़के से बातें करता रहा और विचित्र जन्तु को देख न सका। अब उसकी नज़र उस पर पड़ी। वह चकित रह गया। केशव उसका हाथ पकड़कर उसके पास ले गया। उसके सींग की ओर अंगुली दिखाते हुए उसने कहा—"देखो, खून मुँह पर भी है। यहाँ देखो यहाँ, ये सब खून के दाग हैं।"

"यानि जो अफ़वाहें नगर में उड़ी थीं, वे बिल्कुल गलत न थीं। इसने सेनापति और उसके सैनिक को मारा है। सैनिक

कुछ कहीं करके आया है।" केशव ने कहा।

"खैर, किसी की भी गलती हो, जब सैनिक आयेंगे, तो हमें न छोड़ेंगे। तुम कहीं भाग जाओ, यह लो तलवार, जब से तुम्हारा बाबा मरा है, तब से यह दीवार पर लटक रही है। यह और तुम्हारे पास के बाण आत्मरक्षा के काम आयेंगे। राज-सैनिकों के हाथ पकड़े जाने की अपेक्षा तो यही अच्छा है कि तुम लड़ते लड़ते प्राण दे दो।"

केशव ने पिता के हाथ से तलवार लेते हुए पूछा—"तब तुम क्या करोगे?"

"मैं....! मैं अपनी रक्षा स्वयं कर लूँगा। तिस पर बूढ़ा ही हूँ, हजार साल तो जीऊँगा नहीं, मैं राज-सैनकों की नज़र में ही नहीं पड़ूँगा। मैं इन पशुओं को जंगल में हांक दूँगा, वे भी उनकी नज़रों में नहीं पड़ने चाहिये। न मालूम वे क्या करें।" बूढ़े ने कहा।

वे दोनों जब यों बातें कर रहे थे कि उनको जंगल में कहीं घोड़ों का आना सुनाई दिया।

बूढ़े ने लड़के की ओर देखा। केशव तुरत विचित्र जन्तु के पास गया। उसका

जंगल में आ रहे हैं। किसी ने अफ़वाह उड़ा दी है कि तुम शत्रु देश के गुप्तचर हो और वेष बदलकर यहाँ रह रहे हो। तुम पर इन सैनिकों के कारण आपत्ति आनेवाली है।" बूढ़े ने इधर उधर देखते हुए कहा।

"इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, सेनापति ने स्वयं आफ़त मोल ली थी। इस विचित्र जन्तु के गले में फन्दा डालकर वह ले गया, उसे मारकर शायद यह फिर वापिस आ गया है। जब उसके सींग पर मैंने खून देखा, तभी मैं जान गया कि यह

गलकम्बल पकड़कर उसने कहा—"यदि मुझे इन सैनिकों से अपने को बचाना है, तो मुझे इस पर सवारी करनी ही होगी। पता नहीं क्यों यह मेरे सामने इतना सीधा रहता है।" वह उस पर चढ़ बैठा।

विचित्र जन्तु की आँखें एक क्षण जाने क्यों मुदीं। "हूँ, तो भागो, जहाँ तुम चाहो, भागते जाओ" केशव ने उसके गले के बाल पकड़े और पेट पर ऐड़ी मारी। वह तूफ़ान की तरह पहाड़ की ओर भागा।

विचित्र जन्तु की रफ़्तार देखकर केशव डर गया। उसे भय हुआ कि कहीं उसकी पकड़ ढीली न हो जाये और कहीं वह गिर न जाये। विचित्र जन्तु पक्षी की तरह उड़ता एक पत्थर से दूसरे पत्थर पर कदम रखता, पर्वत के शिखर की ओर जल्दी जल्दी जाने लगा।

वह पर्वत प्रदेश बड़ा भयंकर था। वहाँ बड़े बड़े पेड़ थे, झाड़ियाँ थीं, गुफायें थीं। वहाँ गरजते चीते थे। भालू थे। साँप थे। उनको देखकर केशव ने सोचा कि वह ज़िन्दा न बचेगा। इन क्रूर जन्तुओं के हाथ मारे जाने के बनिस्पत यही अच्छा होता कि ब्रह्मापुर के सैनिक मुझे पकड़ ले जाते और जेल में डाल देते।

"इस विचित्र जन्तु ने मुझे धोखा दिया है।" केशव ने सोचा। फिर उसे सन्देह हुआ कि जन्तु ने कैसे उसका अपकार किया था। जैसे उसके पिता ने कहा था हो सकता है कि यह कोई मायावी राक्षस हो। कुछ भी हो अब किया भी क्या जा सकता है। जहाँ ये जन्तु ले जायेगा, वहाँ जाना ही होगा। यदि वह उसे तलवार से मार भी देता तो उसको क्रूर पशुओं के बीच रहना पड़ता। वहाँ से

जीते जी बाहर निकलना असम्भव है। कुछ मुझे सूझना क्यों नहीं है?

केशव इन सन्देहों में उलझा हुआ था कि विचित्र जन्तु एक ऊँची चट्टान से खड्ड में कूदा और सामने की गुफा के पास हिनहिनाता झट खड़ा हो गया।

इसके बाद उस अन्धेरी गुफा में कहीं कुछ रोशनी टिमटमायी। इतने में मशाल की रोशनी हुई। काला धुँआ दिखाई दिया। यह भी सुनाई दिया—हाँ आँ, फट भट हूं।

केशव स्तब्ध-सा खड़ा रहा। तुरत वह तलवार निकालकर विचित्र जन्तु पर से कूदा।

गुफा में हमेशा की तरह अन्धेरा हो गया। रोशनी और धुँआ भी गायब हो गये। मन्त्रों की ध्वनि भी समाप्त हो गई। सब जगह नीरवता थी। इस परिवर्तन ने केशव को चकित कर दिया।

गुफा में कोई था, हो सकता है कि वह राक्षस हो, मान्त्रिक हो, सम्भव है कि नरमांस भक्षक ही हो।" वह सोचने लगा।

केशव ने एक क्षण में सोच लिया। जो गुफा में है, अन्धेरे के कारण वह उसे देख न पाया था। परन्तु चूँकि वह रोशनी में था, इसलिए उसने उसे अवश्य देख लिया होगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मुझे पकड़ने के लिए वह कोई चाल चल रहा है। इसलिए वहाँ से यथाशीघ्र भाग जाना ही अच्छा था।

केशव ने यह सोचते हुए विचित्र जन्तु की ओर देखा। पर वह उसकी पहुँच के बाहर था। वह कुछ दूरी पर एक पत्थर के सहारे खड़ा था और सींग को एक और पत्थर पर रगड़ रहा था। केशव ने
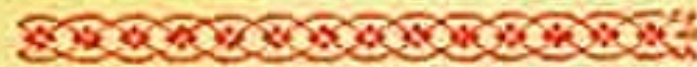
एक छलांग में उसे पकड़ना चाहा। परन्तु इतने में वह एक बड़े चट्टान पर जा खड़ा हुआ।

केशव की निराशा का तो कहना ही क्या, जब उसकी जान पर आ रही थी तभी विचित्र जन्तु वहाँ से खिसक गया। पैदल वहाँ से भागने का प्रयत्न करना श्रेयष्कर न था। पत्थरों के पीछे कोई भी पशु उसको पकड़कर मार सकता था, खा सकता था।

अब क्या किया जाय? केशव ने धीरज धरा। जिस हाथ में तलवार थी, उसमें उसने कुछ बाण भी ले लिये। दूसरे हाथ में धनुष लेकर होशियारी से एक-एक कदम रखता, वह गुफ़ा के सामने से पीछे हट गया।

यकायक गुफ़ा में प्रकाश हुआ। उस रोशनी में केशव को एक कुरूपी दिखाई दिया। उसकी नोकीली दाढ़ी थी। काला मुँह, सिर पर शिरस्त्राण था। उसको देखते ही केशव स्थिर खड़ा रह गया।

"वत्स, डरो नहीं, डरो नहीं, मैं तुमको अभय देता हूँ। तुम्हें और तुम्हारे पिता को भी दुष्टों से बचाने की जिम्मेवारी मुझ

पर है।" कहता वह कुरूपी गुफ़ा से बाहर आया।

इस कुरूपी की बात सुनकर, केशव पुलकित हो उठा। "यह कोई भी हो, मेरे बारे में सब कुछ जानता है।" अब उसके लिए वहाँ से भागना व्यर्थ था। भले की अपेक्षा बुरा होने की अधिक आशंका थी। यह कुरूपी, जो इतना प्रेम दिखा रहा है, क्या बिना प्रत्युपकार के मेरी और मेरे पिता की रक्षा करेगा?

"वत्स! क्या तुम मेरी शक्ति में सन्देह कर रहे हो? इधर आओ। गुफ़ा में

CHITRA
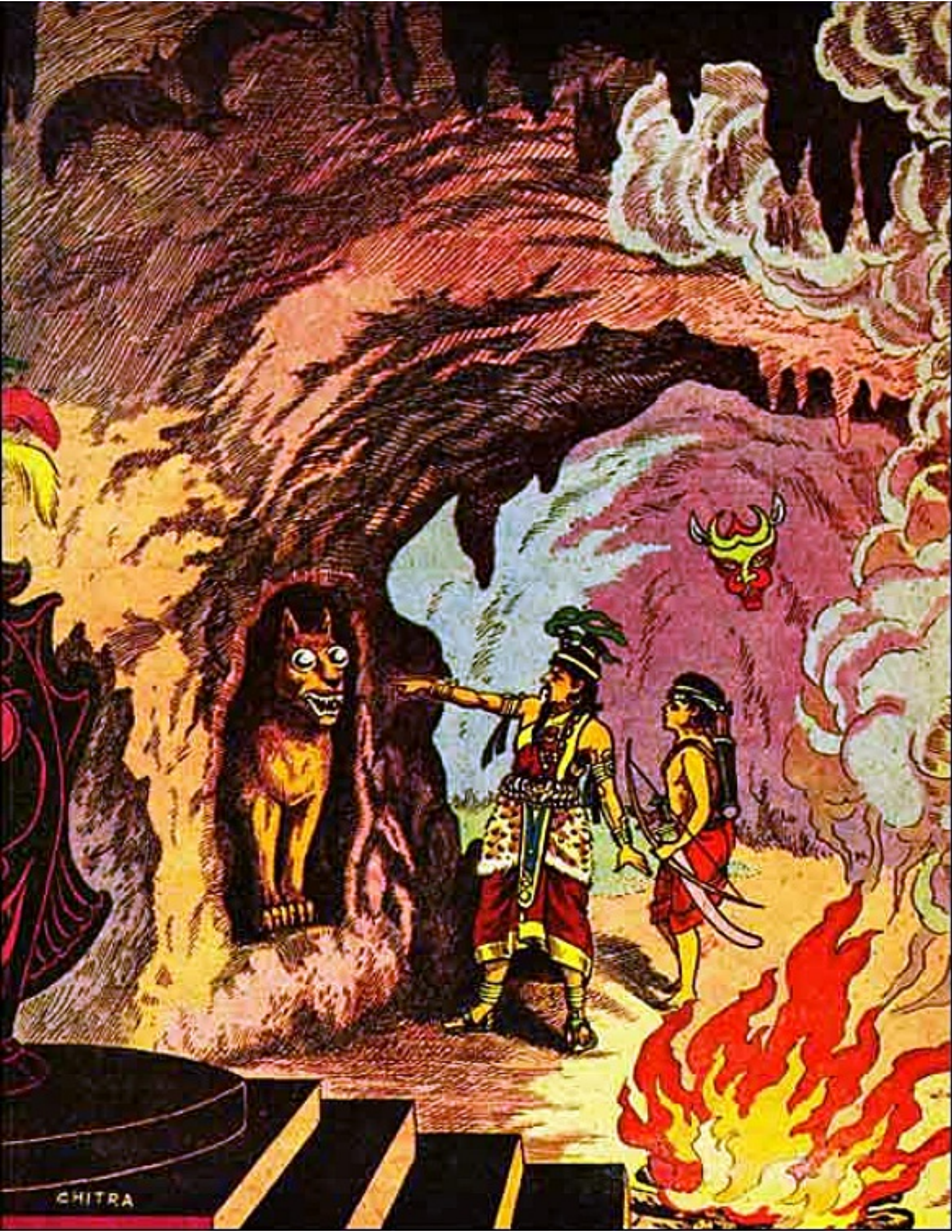
आओ।" कहकर कुरूपी पीछे मुड़ा, फिर रुका, केशव को गौर से देखते हुए उसने पूछा—"क्या मेरे साथ गुफ़ा में आने के लिए डर रहे हो?"

इस प्रश्न पर केशव को गुस्सा आ गया। शायद वह सोच रहा है कि मैं डरपोक हूँ। वह जोश में आ गया।

"तुम्हारे साथ गुफ़ा में ही नहीं, चाहो जहाँ आ सकता हूँ। मैं जंगलों में ही पैदा हुआ, जंगलों में ही पला हूँ। भय किसको कहते हैं, मैं नहीं जानता। पर सन्देह जो मुझे बींध रहा है, वह यह है कि तुम्हें मुझे और मेरे पिता के बारे में कैसे मालूम हुआ?"

"तो आओ, गुफ़ा में आओ, मैं तुम्हारा सन्देह निवारण कर देता हूँ। यदि तुमने गुफ़ा के अन्दर कालभैरव की आँखों में देखा, तो संसार में जो कुछ हो रहा है, जो जो गुज़र रहा है, वह तुम जान जाओगे।" कुरूपी ने केशव की आँखों में देखते हुए कहा।

केशव उसके साथ गुफ़ा में गया। गुफ़ा के अन्दर सब जगह अन्धेरा था। उस अन्धेरे में दस कदम चलने के बाद

पहाड़ में उसे एक बिल-सा दिखाई दिया। उसमें एक कुत्ते की आकृति पत्थर में बनाई हुई दिखाई दी। उसकी दोनों आँखें अंगारों की तरह चमक रही थीं।

"यह ही कालभैरव है। उपासकों के लिए वट वृक्ष और शत्रु के लिए कंटीला पेड़, जय कालभैरव!" कहते हुए कुरूपी ने किसी जड़ से मूर्ति की आँखें एक बार छुईं। तुरत पीछे कदम रखते हुए कहा—"केशव, अब तुम कालभैरव की आँखों में देखो। वह देखो, तुम्हारा पिता वह रहा, तुम्हारा

पशुओं का झुन्ड। सैनिक देखो, तल्वारों को लेकर, अहा....अहा....अहा!" वह जोर से हँसा।

केशव ने कालभैरव की आँखों में देखा। उसका बूढ़ा पिता झाड़ियों के पीछे बैठा था। गौवें इधर उधर जंगल में भाग दौड़ रही थीं। घोड़ों पर सवार होकर उनको चारों तरफ़ से सैनिक भगा रहे थे।

यह दृश्य देखते ही केशव को बड़ा शोक हुआ। उसका पिता डर के मारे पेड़ के पीछे छुप गया। राज-सैनिक उसकी गौवों को पकड़कर ले जाने की सोच रहे थे। पशु न रहे, तो जंगलों में घास पत्ते खाकर उसके पिता को जीवित रहना पड़ेगा। ठीक ऐसे समय में मुझे इस पहाड़ पर आना था।

कुरूपी केशव के मन के भावों को ताड़ गया। उसने हँसते हुए कहा—"दुःखी मत हो केशव, तुम्हारे पिता की, तुम्हारे पशुओं की रक्षा मैं करूँगा।" कहता वह गुफ़ा से बाहर आया। "शिष्य, शिष्य, कहाँ हो! तुम जाकर उन सैनिकों को भगा दो, पशुओं की रक्षा करो।" वह जोर से चिल्लाया।

केशव को जो कालभैरव की आँखों में देख रहा था, एक विचित्र दृश्य दिखाई दिया। एक विचित्र काली चीज़, जिसका मुख मनुष्य की तरह था और चमगादड़ के से पंख थे जंगल में सैनिकों के सिरों कलाबाजियाँ खाने लगी। उस भयंकर पक्षी को देखकर, चीखते चिल्लाते डर के मारे सैनिक इधर उधर जंगल में भागने लगे।

(अभी है)

अपराजिता

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतार कर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुम्हारे परिश्रम को देखकर मुझे लगता है कि कहीं तुम प्रेम के वश में तो नहीं आ गये हो, क्योंकि प्रेम में बहुत बल है! इसका उदाहरण केशव महाराजा की कहानी ही है। तुम्हें ताकि थकान न मालूम हो, मैं उस विचित्र महाराजा की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

किसी समय पाताल लोक में अपराजिता नाम की नाग कन्या रहा करती थी। उसका सौन्दर्य निरुपमेय था। नाग कन्यायें स्वतन्त्र थीं। वे जहाँ चाहे रहतीं, जो चाहे करतीं। इसलिए यह नाग कन्या पाताल लोक छोड़कर, भूलोक में एक नदी

के किनारे पोखर में रहा करती। उस कीचड़ में चन्द्रकान्ता शिलायें थीं। वह एक शिला पर बैठकर, पोखर में अपने पाल्तू मछली से खेला करती। उसमें तैरा करती। उसके आस-पास कुछ कीचड़ भी था, क्योंकि आस-पास बहुत-सी झाड़ियाँ थीं, इसलिए उस तरफ़ कोई न आया करता। अपराजिता भी न चाहती थी कि कोई उसे देखे—इसलिए वह वहाँ बड़े मज़े में रहती।

अपराजिता के पोखर के पास एक नगर था। उस नगर का राजा केशव था। उसका सौन्दर्य वर्णनातीत था। वह मन्मथ सा था। पर उसे स्त्रियों से चिढ़ थी। इस चिढ़ का कारण भी था। केशव के पिता की कितनी ही पत्नियाँ थीं। उन सबने उसको धोखा दिया। क्योंकि केशव के पिता को उनसे चिढ़ थी, इसलिए केशव को भी उसने उनसे द्वेष करना सिखाया। यह द्वेष केशव के रग-रग में था। इसीलिए केशव यद्यपि कन्याओं का मन आकर्षित करता था, पर उसका मन कोई भी स्त्री आकर्षित न कर पाती थी।

केशव के नगर में कामरूप नाम का नाई रहा करता था। उसकी शक्ल ठीक उसके नाम से उल्टी थी। कानी आँख, चपटे पैर, तिस पर कुबड़ा, यदि कोई उसे दिन में देख लेता, तो वह रात को सपने में दिखाई देता। वह इतना भोंड़ा था।

वह कामरूप यूँही घूमता घामता, एक दिन उस पोखर के पास आया, जहाँ अपराजिता रहा करती थी। अपराजिता को देखते ही वह उस पर मुग्ध हो उठा। परन्तु अपराजिता उसकी बदसूरती देखकर चिढ़-सी गई। उसने उसे डँपटा—"जाओ मेरी आँखों के सामने से।"

वह पगला-सा गया और शहर वापिस चला गया।

इसके कुछ दिन बाद केशव जंगल में शिकार के लिए गया। जब वह वापिस घर जा रहा था, तो वह इतनी तेज़ी से गया कि उसके नौकर-चाकर पीछे रह गये। जंगली रास्ते से वह उस पोखर के पास पहुँचा, जहाँ अपराजिता रहा करती थी। तब वह पाल्तू मछली से खेल रही थी। यह जानकर कि कोई उसके गुप्त स्थल के समीप आ गया था, वह उठकर बैठ गई। दोनों एक दूसरे के सौन्दर्य को देखकर मन्त्र मुग्ध से हो गये।

उसी समय अपराजिता, केशव से प्रेम करने लगी। क्योंकि वह स्वतन्त्र थी, उसने उससे अपने प्रेम के बारे में कहा भी, उसने उसका आलिंगन करने का भी प्रयत्न किया। केशव ने उसको अलग हटाकर कहा— "स्त्रियाँ मायावी होती हैं, उनका स्पर्श साँप के काटने के समान है। मैं स्त्रियों की चालों में आनेवाला नहीं हूँ।" कहता वह पोखर के पास की झाड़ियों को पार करके आ गया।

उसी समय उसके आदमी भी आ गये। राजा उनके साथ नगर चला गया, परन्तु

उसमें बड़ा परिवर्तन आ गया। केशव ने अपराजिता के प्रेम को तो धिक्कार दिया था, परन्तु उसके सौन्दर्य ने उसको वशीभूत-सा कर दिया था।

जब से वह शिकार से लौटा, तब से राजा ने न कुछ खाया, न वह सोया ही। मन्त्रियों से मन्त्रणा भी न करता। वह पागल-सा हो गया। मन्त्रियों ने सोचा कि राजा पर कोई भूत सवार हो गया था। वैद्यों को, भूत वैद्यों को, मन्त्र वैद्यों को बुलाकर उसकी चिकित्सा की गई। इस चिकित्सा का राजा पर कुछ भी प्रभाव न हुआ।

कोई यह न जान सका कि केशव राजा प्रेम व्याधि से ग्रस्त था। कोई यह न जानता था कि वह अपराजिता को देखकर आया था। राजा भी इस प्रेम में पड़ गया था, पर अपने प्रेम को सफल करने के लिए उसने कुछ न किया।

अपराजिता प्रेम की शिकार थी। परन्तु उस प्रेम को सफल करने के लिए वह आवश्यक कार्य कर रही थी। वह पोखर में कूद कर पाताल लोक गई। वह अपने पिता से मिली। उसने उससे कहा—"पिता जी, मुझे परकाय प्रवेश मन्त्र सिखाओ।" नाग राजा ने अपनी लड़की को दो मन्त्र सिखाये। एक शरीर को छोड़ने का मन्त्र, दूसरा शरीर में प्रवेश करने का मन्त्र। इन दोनों मन्त्रों को अपराजिता ने कंठस्थ कर लिया। उसने भी, जैसे भी हो, उनकी सहायता से अपना प्रेम सफल करने की सोची। फिर वह उसी पोखर में वापिस चली आई।

इस बीच कुबड़ा नाई अपराजिता को याद करके नाना कष्ट झेल रहा था। उसे लगा कि उसी कष्ट में वह मर भी जायेगा। उस जैसी परम सुन्दरी, उस जैसे कुरूपी

को आँख उठाकर भी न देखेगी। यदि वह ही उसे देखता रहा तो कम से कम वह जीवित तो रह सकेगा।

यह ख्याल आते ही वह पोखर के पास गया और वहाँ झाड़ियों में बैठ गया। कामरूप छुपे छुपे नागकन्या को देखना चाहता था। परन्तु उसने एक सूखी लकड़ी पर पैर रखा। वह टूटी और ध्वनि हुई। अपराजिता ने सिर उठाकर देखा। उसने इस बार क्रोध न दिखाया। उसने उसको अपनी तरफ़ आने का संकेत किया।

एक तरफ़ डरता डरता और दूसरी तरफ़ आनन्द में तन्मय हो, कामरूप नागकन्या के पास पहुँचा। उसने उसको अपने पत्थर के पास बिठाया। और कहा—"मैं जानती हूँ, तुमको मुझ पर कितना प्रेम है। परन्तु तुम कुरूपी हो। सुना है कि तुम्हारा राजा कामदेव की तरह सुन्दर है। अगर तुम उसके शरीर में प्रवेश कर सके तो मैं तुमसे प्रेम कर सकती हूँ। तुम्हारा प्रेम भी सफल हो सकेगा। इसके लिए आवश्यक दो मन्त्र मैं तुम्हें बताऊँगी। पर उनको बुद्धिमत्ता से उपयोग

करने का भार तुम पर है। उसने अपने पिता के बताये हुए दोनों मन्त्र उसे बता दिये। उसके सन्तोष की सीमा न रही।

राजा की बीमारी जब ठीक न हुई तो यह घोषणा की गयी कि जो कोई उसकी चिकित्सा करेगा उसको उसके भार के बराबर सोना दिया जायेगा।

कुबड़ा राजा की चिकित्सा करने के बहाने अपना काम करने के लिए राजमहल में गया। पहिले तो पहरेदारों ने उस पर विश्वास न किया। फिर उन्होंने उसको अन्दर जाने दिया।

वह उस जगह गया जहाँ राजा और उसके कर्मचारी रहा करते थे। वह वहाँ नाचने लगा। सब के साथ राजा भी खूब हँसा।

फिर कुबड़े ने राजा से कहा—"महाराज, आप अपने नौकर चाकरों के साथ मेरे साथ जंगल में आइये। वहाँ एकान्त में एक आश्चर्यजनक बात दिखाऊँगा।"

राजा इसके लिए मान गया। कुबड़ा राजा को वन में एक एकान्त स्थल पर ले गया। वहाँ उन्हें एक मरा तोता दिखाई दिया। "महाराज, देखिये मैं परकाय प्रवेश करता हूँ।" कहते हुए कुबड़े ने पहिला मन्त्र पढ़ा। अपना शरीर छोड़ तोते के शरीर में प्रवेश किया। तोता जी उठा। उसने पूछा—"देखा, महाराज!" फिर वह दूसरा मन्त्र पढ़कर मृत होकर गिर गया। वह कुबड़ा नाई जो तब तक लकड़ी की तरह पड़ा था, उठकर बैठ गया।

फिर उसने राजा से कहा—"महाराज, इसमें कोई भेद नहीं है। जो मन्त्र मैं जप रहा हूँ, यदि आप भी जपेंगे तो

आप भी परकाय प्रवेश कर सकते हैं। भय न हो तो इस तोते में प्रवेश करके देखिये।"

जब कुबड़े ने ये बात कही, तो राजा ताव में आ गया। उसने भी दो मन्त्र सीख लिये। पहिले मन्त्र की सहायता से उसने तोते के शरीर में प्रवेश किया। तुरत कुबड़े ने राजा के शरीर में प्रवेश किया। राजा के घोड़े पर सवार होकर तेज़ी से और लोगों के साथ राजमहल पहुँचा।

राजा धोखा समझ गया। मरे तोते से अच्छा कुबड़े कुरूपी नाई का ही शरीर था। उसमें प्रवेश करके वह पैदल चला। परन्तु वह राजमहल में प्रवेश न पा सका। उसने पहरेदारों से कहा—"मैं असली राजा हूँ। जो राजा बनकर आया है, वह नाई है।" उन्होंने उसे पकड़कर दूर धकेल दिया।

राजा अपनी परिस्थिति पर सोचता सोचता पगला-सा गया। वह राज्य तो खो ही बैठा था, अब उसे बदसूरत शरीर भी मिला था। जिसने उसकी यह हालत की थी, वह उसका कुछ भी न बिगाड़ सकता था। यदि वह सच भी कहता, तो कोई उसका विश्वास न करता। यह सब

कि नाई आपके शरीर से बाहर आ जाये, आप तब तुरत उसके शरीर में घुस जाइये।"

उसके झाड़ियों में छुप जाने के थोड़ी देर बाद, नाई कामरूप राजा के शरीर में आया। इस बीच अपराजिता पोखर में से एक मरी मछली निकालकर उसे पत्थर पर डालकर रोने लगी।

नाई ने उसके पास आकर कहा—"मैं ऐसे शरीर में आया हूँ, जो तुम्हें पसन्द है। अब मुझे तुम प्यार करो...."

"तुम तुरत चले जाओ। वह मछली, जो मेरे लिए मछली के समान थी, मर गई है। मुझे बड़ा दुःख हो रहा है।" अपराजिता ने कहा।

"क्या मछली के लिए मुझे छोड़ दोगी!" नाई ने पूछा।

"बिना उस मछली की अनुमति के मैं कुछ भी नहीं करती।" कहकर अपराजिता रोने लगी।

"यदि तुम मछली की ही अनुमति चाहती हो, तो मैं फौरन वह किये देता हूँ।" कहते हुए नाई ने मन्त्र पढ़ा और मछली के शरीर में जा घुसा। उसने कहा—"तुम निश्चिन्त हो राजा से विवाह करो।"

सोचने पर उसको लगा कि इस तरह जीने से तो मरना ही अच्छा था। पर उसे इतने में नागकन्या का ख्याल आया। उसने कभी उससे प्रेम किया था। नागकन्या है, इसलिए उसे कुछ सिद्धियाँ भी आती होंगी। वह शायद इस दुर्दशा से मुझे बचाने का कोई मार्ग भी जानती होगी।

यह विचार उठते ही कुबड़े नाई के रूप में राजा पोखर के पास गया। उसने अपराजिता को अपनी कहानी सुनाई। उसने सब सुनकर कहा—"आप जाकर झाड़ियों में छुप जाइये। मैं ऐसा करूँगी

मछली यों बात कर ही रही थी कि राजा कुबड़े का शरीर छोड़कर उस शरीर में जा घुसा, जो कुबड़े ने छोड़ा था।

तब अपराजिता ने आनन्दित हो कहा—"अब मेरी माँ ने कह दिया है, मैं राजा से शादी करूँगी।" राजा भी इसके लिए मान गया। नाई अपनी गल्ती जान गया। वह मछली का शरीर छोड़ अपने शरीर में आ गया। राजा ने उसे मारना चाहा, पर अपराजिता ने उसे रोका। राजा ने उसको देश निकाले की सज़ा दी। नाई वह देश छोड़कर चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, यह बताओ, वह राजा, जो स्त्रियों से चिढ़ता था, क्यों अन्त में नागकन्या से विवाह करने के लिए मान गया? क्या इसलिए कि उसके कारण उसको राज्य वापिस मिल गया था, या इसलिए कि उसको उस पर प्रेम था? यदि तुमने इन प्रश्नों का उत्तर जान बूझकर न दिया तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"राजा का अपराजिता ने सब से बड़ा उपकार यह किया कि उसने उसका शरीर उसको वापिस दिलवा दिया। प्रति प्राणी अपने शरीर को सब से अधिक प्यार करता है। उस प्यार के बराबर कुछ भी नहीं है। राजा ने, हो सकता है, कि नागकन्या से प्रेम किया हो। यह भी सम्भव है कि राज्य खो बैठने पर उसको दुःख हुआ हो। परन्तु उसे कभी उतना सुख न हुआ होगा, जो उसे पुनः अपना शरीर प्राप्त करने पर...."

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और फिर पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

नेक आदमी

श्रीरंगपट्टनं में हीरा सेठ रहा करता था। वह बड़ा धनी था। विदेशों से भी व्यापार किया करता था। एक बार हीरा सेठ के पास रामचन्द्र नाम का आन्ध्रदेश का एक अमीर आया। उसने हीरा सेठ के पास कीमती हीरे देखे। उनमें से एक हीरा रामचन्द्र को बड़ा पसन्द आया। जब रामचन्द्र ने उसकी कीमत पूछी, तो हीरा सेठ ने चार हज़ार मुहरें बताईं। रामचन्द्र के पास तीन हज़ार मुहरें ही थीं। फिर भी उसने वह हीरा छोड़ना न चाहा। उसने हीरा सेठ से कहा—"सेठ साहब, इस समय मेरे पास तीन हज़ार मुहरें ही हैं। हीरा मुझे दे दीजिये। मैं घर जाकर बाकी हज़ार मुहरें भेज दूँगा।"

रामचन्द्र अच्छे कुल का था। नेक नीयतवाला आदमी था। यह हीरा सेठ भी जानता था। इसलिए हीरा सेठ ने उससे कहा—"अच्छा तो ऐसा ही कीजिये। जो कुछ आपको देना है, उसका ब्योरा मैं बही में लिखे देता हूँ।"

रामचन्द्र बड़ा खुश हुआ। वह हीरा लेकर अपने देश पहुँचा। घर पहुँचने के थोड़े दिन बाद वह बीमार पड़ गया। उस बीमारी का इलाज़ भी न किया जा सका। वह एक महीने बिस्तरे पर पड़ा रहा, फिर मर गया। मरने से पहिले उसने अपने लड़के पद्मनाभ को बुलवाकर कहा कि वह कुछ दिन पहिले श्रीरंगपट्टनं के हीरा सेठ के पास से एक हीरा लाया था। उसने अपने लड़के से प्रतिज्ञा करवाई कि जो कुछ उसको देना था वह उसके पास पहुँचा देगा।

रामचन्द्र जब तक जीवित रहा मजे से जिया। उसने भोग विलास में अपनी सारी

सम्पत्ति खर्च दी थी। इसलिए उसकी मृत्यु के बाद दमड़ी भी न बची। पद्मनाभ ने कोशिश तो बहुत की, पर वह हीरा सेठ का ऋण न चुका पाया। आखिर उसने पिता के हीरे को बेचकर उसका ऋण चुकाने की ठानी। परन्तु उतने कीमती हीरे को खरीदनेवाला उसे न दिखाई दिया।

आखिर पद्मनाभ उस हीरे को लेकर सीधे श्रीरंगपट्नं गया। यदि उस शहर में वह हीरा बिक गया तो अच्छा था, नहीं तो उसने हीरे को हीरा सेठ को देने की ठानी। जितना वह देगा, उसे वह लेने के लिए तैयार हो गया।

पर जब पद्मनाभ श्रीरंगपट्नं पहुँचा। तो शत्रु राजा उस शहर को लूट रहे थे। नगर में अराजकता थी। उस हालत में यदि पद्मनाभ वापिस चला जाता, तो अच्छा होता। परन्तु उसने नगर भर घूमकर हीरा सेठ का घर खोजने की सोची। इस तरह वह शत्रुओं के हाथ आ गया। उन्होंने पद्मनाभ को पकड़ लिया। उसके पास जो हीरा था, वह ले लिया। उसको खूब मार पीटकर छोड़ दिया।

जब श्रीरंगपट्नं पर शत्रुओं ने हमला किया, तो हीरा सेठ का लड़का वहाँ से मैसूर भाग गया। शत्रु सैनिक, जो कुछ हीरा सेठ के पास था, लूट कर ले गये। हीरा सेठ ने इसी शोक में चारपाई पकड़ी और वह मर गया। हीरा सेठ का लड़का, जो मैसूर गया था, पिता का नाम लेकर कुछ दिन कर्ज़ लेकर गुज़ारा करता रहा। फिर कर्ज़ भी न मिला और वह परम दारिद्र्य में मर गया।

हीरा सेठ के वंश का, उसका एक पोता ही अब केवल जीवित रह गया था।

वह बड़ा बुद्धिमान था। उसे दादा की धन-सम्पत्ति तो न मिली, पर पिता का ऋण चुकाने को मिला। उसने परिश्रम करके पढ़ा लिखा, बड़े बड़े व्यापारियों के यहाँ छोटी मोटी नौकरी की। जो कुछ कमाता उसमें से थोड़ा बहुत बचाकर वह पिता का ऋण भी चुकाता आ रहा था।

उधर पद्मनाभ भी बहुत दिन न जिया। उसने पिता को वचन दिया था कि हीरा सेठ का ऋण चुकायेगा। वह फिजूल हीरा खो ही न बैठा था, पर बुरी तरह पीटा भी गया था। उस मार के बाद वह फिर ठीक न हो सका। उसने मृत्यु के समय अपने लड़के चन्द्रशेखर को बुलाकर कहा—"बेटा, श्रीरंगपट्नंके हीरा सेठ को तुम्हारे दादे को हज़ार मुहरें देनी थीं, मैं उस ऋण को उतारने गया और मुझे नुक्सान उठाना पड़ा। इसलिए तुम ही मेहनत करके धन कमाओ। श्रीरंगपट्नं जाओ। हीरा सेठ को वह धन देकर उसकी बही में जो कुछ हमारे मद्दे लिखा है, उसे कटवा दो। जब तक तुम यह न करोगे, तब तक मेरी आत्मा और तुम्हारे दादा की आत्मा को शान्ति न मिलेगी।

चन्द्रशेखर ने मेहनत करके कुछ धन जमा किया। उसने जल्दी ही चार हज़ार मुहरें इकट्ठी कर लीं और उन्हें लेकर वह श्रीरंगपट्नं गया। उसे पता लगा कि हीरा सेठ और उसका लड़का मर गये थे। गोविन्द सेठ नाम का एक व्यक्ति उनका उत्तराधिकारी था। चन्द्रशेखर गोविन्द सेठ के घर गया। उसने उसको अपना पता ठिकाना बताया।

"क्यों भाई, ज़रा अपने दादा के समय की बही निकालोगे? उसमें हमारे कर्ज़ का कुछ हिसाब है।"

यह सुनते ही गोविन्द सेठ चकरा-सा गया। उसी दिन उसने पिता के ऋण को पूरा पूरा उतारा था। उसने सोचा कि पिता के ऋण उतर गये थे कि इतने में बाबा के ऋण सिर पर पड़ते लगते हैं।

उसने चन्द्रशेखर से कहा—"पिता के ऋण उतारते उतारते ही मेरी जान आफ़त में है। अब क्या मुझ से आप बाबा का ऋण भी लेंगे! मैं उनके लिए जिम्मेवार नहीं हूँ। वे तो कभी के रद्द हो गये होंगे। मुझे माफ़ कीजिये।"

चन्द्रशेखर ने मुस्कराकर कहा—"आपके बाबा को हमें कुछ नहीं देना है। कभी हमारे बाबा को ही आपके बाबा को हज़ार मुहरें देनी थीं। आपके बाबा ने हमारे बाबा पर विश्वास करके ही यह धन दिया था। प्रतिष्ठित व्यक्ति का वचन कभी क्या रद्द होता है! बाबा का ऋण मय सूद के मैं चुकाने आया हूँ। मेहरबानी करके वह बही ढूँढिये।"

गोविन्द सेठ को चन्द्रशेखर की नेकी पर आश्चर्य हुआ। उसने पुरानी बहियाँ खोजीं। उनमें उसे रामचन्द्र के ऋण का ब्यौरा भी मिला।

गोविन्द सेठ ने चन्द्रशेखर से कहा—"इस ऋण के बारे में जब तक आपने न बताया था, तब तक मैं न जानता था। मैं इसे नकद नहीं ले सकता। आप जैसे नेक आदमी मुझे कहीं न मिलेंगे। आप जो चार हज़ार मुहरें लाये हैं, उनको लेकर हम दोनों साझे में व्यापार करेंगे। अगर आपको आपत्ति हो तो बताइये।"

चन्द्रशेखर मान गया। दोनों ने मिलकर व्यापार किया, खूब कमाया। दोस्ती में मजे करते ज़िन्दगी गुज़ार दी।

कारणहीन सन्देह

प्रसिद्ध लेखक जोनसन के पास आकर एक व्यक्ति ने एक बार कहा—"यह जीवन निरर्थक है। अल्पायु मनुष्य के लिए मुक्ति का मार्ग देखने का समय ही कहाँ है!"

"देखिये, एक आदमी ज्यादह से ज्यादह सौ साल जी सकता है। अनन्त काल में यह कितनी अवधि है! इसमें आधा समय सोने में चला जाता है और बाकी आधा समय कुछ बचपन में, कुछ रोग आदि में चला जाता है और जो बाकी रह जाता है, वह नित्य-कृत्य में, वृत्ति आदि में चला जाता है। इन सब के बाद जो कुछ रहता है, वह सोचने में, लड़ने झगड़ने में चला जाता है। तब मनुष्य के पास निश्चिन्त होकर, मुक्ति के बारे में सोचने का समय कब है! जीवन निरा निरर्थक है!" उस व्यक्ति ने सिर हिला हिलाकर कहा।

डा० जोनसन ने सिर एक तरफ़ मोड़ लिया। उनकी आँखों में सहसा तरी आ गई।

"आप क्यों यों शोक कर रहे हैं!" उस व्यक्ति ने पूछा।

"आप तो परलोक के विषय में सोचते मालूम होते हैं—मेरे सामने, तो इस लोक में ही बड़ी समस्या आ खड़ी हुई है।" जोनसन ने आँसू पोंछते हुए कहा।

"क्या समस्या है!" उस आदमी ने पूछा।

"जो धान मैं खा रहा हूँ, उसको पैदा करने के लिए भूमि पर आवश्यक स्थल नहीं है।" जोनसन ने कहा।

रामतीर्थ

उस आदमी ने पूछा—"आप यह क्यों कह रहे हैं! आप कोई गल्ती कर रहे हैं, यह मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ।"

"तो सुनिये, इस अनन्त विश्व में कितने ही करोड़ ग्रह हैं। हमारा सूर्य भी अणु-सा ग्रह है। भूमि के बारे में कहने की ज़रूरत ही नहीं, वह परमाणु से भी छोटी है। इस छोटी-सी भूमि का तीन चौथाई भाग समुद्र है। जो बाकी है, उसमें से सातवाँ भाग रेगिस्तान है। बाकी में कितनी ही पर्वत पंक्तियाँ हैं। कितनी ही जगह बंजर है। कई बर्फीली जगह हैं। कितनी ही झीलें हैं। कितनी ही नदियाँ हैं। कितने ही महानगर हैं। कितनी ही सड़कें हैं। खाली ज़मीन है। इन सबके बाद कितनी भूमि बाकी रह जाती है! फिर उसमें कितनी फसल हो सकती है! फिर वह सब करोड़ों आदमियों के लिए काफ़ी होती है कि नहीं! असम्भव। मेरे लिए अनाज पैदा करने के लिए भूमि पर जगह नहीं है। जीवन निरर्थक है।" जोनसन ने कहा।

उस आदमी को डा० जोनसन का व्यंग्य समझ में आ गया। जो कुछ उसने कहा था। उसमें तर्क अवश्य था, परन्तु वास्तविकता बिल्कुल न थी, यह वह आदमी जान गया।

साईमन

[२]

साईमन, उस महल में एक जगह लेट गया और सवेरे तक सोता रहा। जब वह उठा तो उसको बाहर गाड़ी की ध्वनि सुनाई दी। यह देखने के लिए साईमन की क्या हालत थी, राजा और राजकुमारी गाड़ी में आये थे। जब उन्होंने जिन्दे साईमन को बाहर देखा, तो उनके आनन्द की सीमा न रही।

"भूत और राजमहल, दोनों का पिण्ड छूट गया है। अब कोई डर नहीं है। आप अन्दर आकर देख लीजिए।" साईमन ने कहा।

राजमहल को मामूली हालत में देखकर राजा बड़ा खुश हुआ। क्योंकि उसने ऐसा काम किया था, जो और कोई न कर पाया था इसलिए राजकुमारी की नजर में साईमन देवता-तुल्य था। वह उसको देखती जाती थी और देखते अघाती न थी।

बारहवें कमरे में जो शव पड़े थे, राजा ने उनकी अन्त्येष्टि क्रिया करवाई। उसने वह महल शुद्ध करवाया, फिर उसने उस में गृह-प्रवेश किया। गृहप्रवेश के साथ साईमन और राजकुमारी की सगाई भी हुई। बहुत बड़ी दावत दी गई।

राजा ने तुरत अपनी लड़की की शादी भी करवादेनी चाही, पर साईमन ने इस पर आपत्ति की। "मुझे घर छोड़कर आये बहुत दिन हो गये हैं। मैं यह नहीं जानता कि मेरे माँ-बाप की क्या हालत है, यह भी नहीं मालूम कि वे जीवित हैं कि नहीं।

वे भी मेरे बारे में नहीं जानते। इसलिए उनको एक बार देखकर आना चाहता हूँ। अगर वे स्वस्थ होंगे, तो उनको साथ ले आऊँगा। तब विवाह की व्यवस्था की जा सकती है।" उसने राजा से कहा।

साईमन की यात्रा के लिए बड़े पैमाने पर तैयारियाँ हुईं। उसने राजकुमारी से विदा लेते हुए कहा कि वह निश्चित अवधि के बाद आ जायेगा। राजकुमारी ने कहा कि यदि तब वह न आया तो वह ही उसके लिए निकल पड़ेगी। बहुत-से नौकर-चाकरों के साथ, एक राजा की तरह साईमन अपने गाँव की ओर रवाना हुआ। दस दिन तक यात्रा ठीक तरह चलती रही। दसवें दिन वे एक घने जंगल में पहुँचे। अन्धेरा होते होते बारिश भी शुरु हो गई। यात्रा बड़ी कठिन हो गई। मुश्किल से रास्ता कट रहा था। सब थक गये थे। थोड़ी देर बाद अन्धेरे में कहीं कोई दिया टिम टिमाता दिखाई दिया। सब उसकी ओर निकल पड़े।

वह कोई जंगली सराय-सी थी। पर उस घने जंगल में, वह जगह ही साईमन को भायी। उसने अपने नौकर-चाकरों के साथ वहाँ रात काटने की ठानी। जो कुछ सरायवाले ने खाने को दिया, वह खा पीकर वे जल्दी ही नाक बजाने लगे। साईमन भी एक कमरे में अकेला सो गया।

वह सराय, जंगली डाकुओं का अड्डा था। उस सराय का मालिक, डाकुओं का साझेदार था। क्योंकि जो सराय में ठहरे थे, वे सम्पन्न थे, उसने सोचा कि डाके का अच्छा मौका था। वह यह डाकुओं से कहने गया।

बारह डाकुओं ने आधी रात के समय, बन्दूकें और तलवार लेकर साईमन के

आदमियों पर हमला किया। सब गाढ़ निद्रा में थे। इसलिए सब मारे गये। डाकुओं ने उनको जी भर के लूटा।

बाहर शोर-शराबा सुनकर, साईमन उठा, उसने सोचा कि कुछ गड़बड़ी हो रही थी। वह अभी सोच ही रहा था कि क्या किया जाये कि चार डाकू उसके कमरे में आये। एक ने साईमन पर बन्दूक चलाई। साईमन को चोट न लगी। पर अगर यह बात डाकुओं को मालूम हो गई तो और आफत थी। इसलिए वह नीचे गिर गया और निश्चल पड़ा रहा। यह सोच कि वह मर गया था, डाकू उसकी अंगूठी और आभूषण, कीमती पोशाक लेकर चले गये।

उनके पीछे ही साईमन निकल पड़ा। उनके कारण उसे जंगल में एक गुप्त मार्ग भी मालूम हो गया। वह उस रास्ते ऐसी सड़क पर पहुँचा, जो उसके गाँव की ओर जाती थी। वहाँ से उसका गाँव एक मील ही था। पर साईमन के पास सिवाय एक कुड़ते के कुछ न था। आखिर, पैरों में चप्पल भी न थी। इसलिए उसने अन्धेरा होने तक झाड़ियों के पीछे रहने की सोची।

परन्तु सौभाग्यवश जल्दी ही उसके गाँव के लोग, जंगल में लकड़ियाँ काटकर घर की ओर जाते हुए उस तरफ़ से गुज़रे—"अरे, तू साईमन ही है न! सुना था कि तुम सेनापति हो गये थे! सेनापति बिना चप्पल के और ठीक कपड़ों के यहाँ क्या कर रहे हैं!"

साईमन ने उनसे सविनय कहा—"मुझे देखकर, हँसी मज़ाक करने का यह समय नहीं है। तुम मुझे जितना गया गुज़रा समझ रहे हो, उतना गया गुज़रा नहीं हूँ। बदकिस्मती से डाकुओं ने मुझे

मारा पीटा और मेरे कपड़े तक लेकर चले गये। जो मेरे साथ थे, उन सबको मार दिया। मैं जैसे तैसे जीता जी भाग आया हूँ।"

ईन्धन काटनेवालों ने अपने कुछ कपड़े साईमन को दिये। उसे अपनी गाड़ी में चढ़ाकर गाँव ले गये। जब साईमन घर पहुँचा तो उसका पिता वहाँ न था, कहीं बाहर गया हुआ था। माँ ने उसको देखकर खुशी से आँसू बहाये। "अरे बेटा, कितने दिन हो गये हैं, जाने तुमने कितनी मुसीबतें झेली होंगी। जाने दो, यही काफ़ी है कि तुम जीते जी घर आ गये।"

इतने में उसे पति की बात याद आई, अगर उसने साईमन को देखा, तो वह उसे मार देगा। इसलिए वह अपने लड़के को तहखाने में ले गई, वहाँ उसको छिपा दिया।

साईमन का पिता घर आया। उसने पत्नी की शक्ल देखते ही मालूम कर लिया कि ज़रूर कोई बात थी। "तू रोती हुई मालूम होती है! आँखें सूजी हुई हैं। क्या हो गया है?"

"यह तो खुशी के आँसू हैं, लड़के का पता ठिकाना मालूम हो गया है।"

"उस नलायक के लिए आँसू बहा रही हो। अगर इस बार वह मिल गया, तो उसे जिन्दा नहीं छोड़ूँगा।" साईमन के पिता ने कहा।

उसके यह कहते ही उसकी पत्नी इस बार शोक में रोयी। यह देख उसके पति ने पूछा—"कहाँ है, वह! कहाँ छुपा रखा है तूने उसे!"

"जब तक तुम यह न वचन दोगे कि कुछ न करोगे, मैं नहीं बताऊँगी।" पत्नी ने कहा। जब पति ने वचन दिया, तो वह उसको तहखाने में ले गई, साईमन को दिखाया। उसने लड़के को सज़ा तो नहीं दी, पर उसे माफ़ भी न किया।

वह अपने आश्चर्यजनक कार्यों के बारे में पिता से कह भी न सकता था। उसको उसकी बातों पर विश्वास न होगा। यदि वह नौकर-चाकरों के साथ आता, तो पिता को विश्वास दिला सकता था कि वह एक राजकुमारी से विवाह करनेवाला था। डाकुओं के कारण उसके लिए यह भी सम्भव न था।
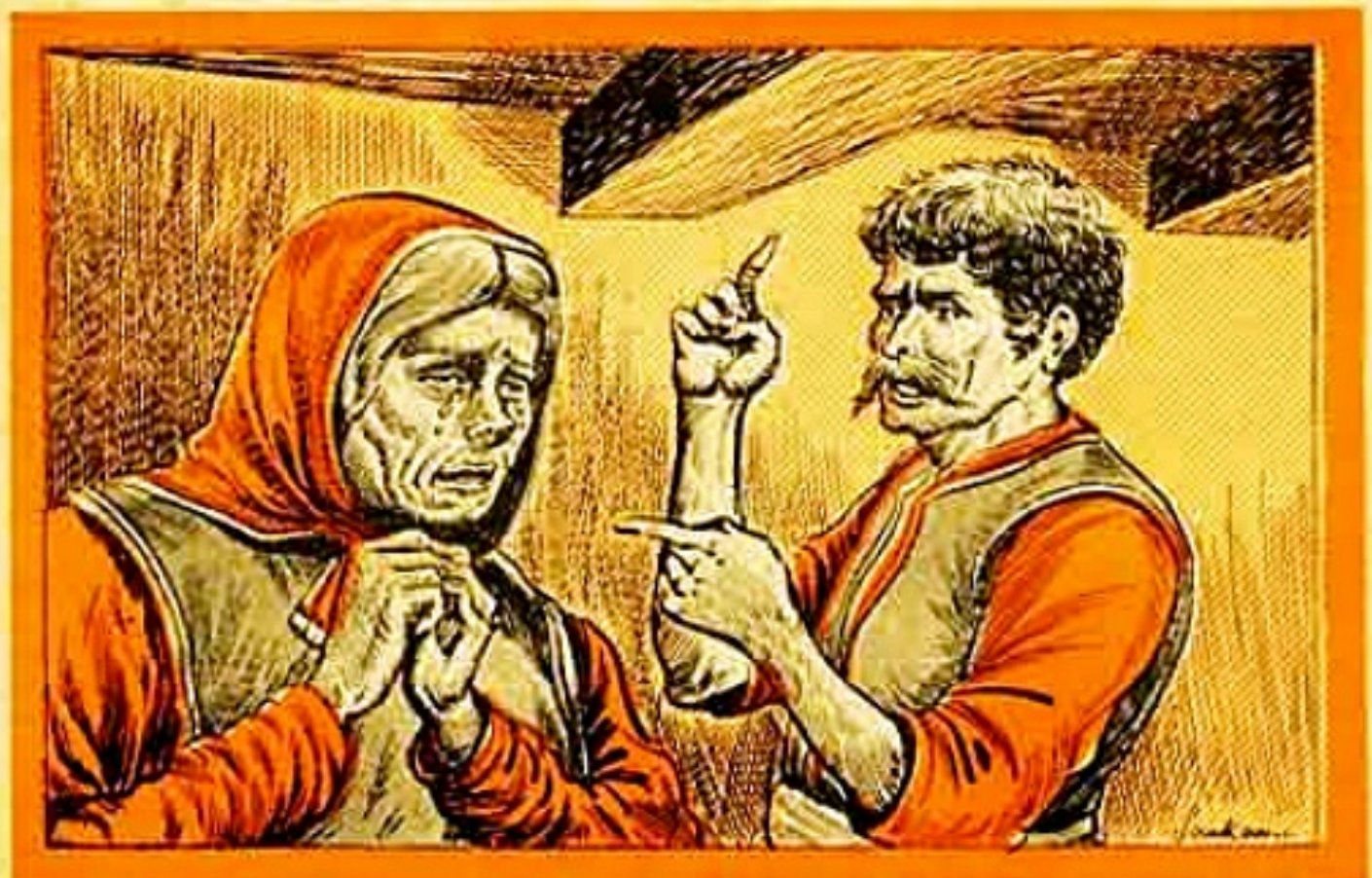
साईमन को उसके पिता ने गड़रिये की पोषाक दी और उसे कुछ भेड़-बकरियाँ देकर दिन-भर चराने के लिए कहा। साईमन यह करने लगा। उसकी यह हाल्त हो गई थी, यह सोच उसको चिन्ता भी न हुई। यदि वह निश्चित अवधि में वापिस न गया, तो राजकुमारी उसके लिए आयेगी ही। इस बीच वह भेड़ों को चरागाह में चराता, बाँसुरी बजाता, भेड़ों को कुछ बातें सिखाता, समय बिताने लगा।

उधर राजकुमारी निश्चित अवधि तक प्रतीक्षा करती रही, फिर वह अपने नौकर-चाकरों को लेकर साईमन के गाँव की ओर निकली।

वे भी उसी रास्ते गये। जिस रास्ते साईमन गया था। वे भी दसवें दिन उसी जंगल में पहुँचे। उन्होंने भी उसी सराय में पड़ाव किया, जहाँ साईमन ठहरा था।

उनके आने के कुछ देर बाद, सराय के मालिक साथ के डाकुओं से कहने के लिए गया। "इस बार तो और धनी लोग आये हैं। अच्छा मौका है। यदि तुम आधी रात के समय आये तो तुम्हें सोना, गहने, हीरे, मोती, रेशमी कपड़े, ढेर के ढेर मिलेंगे।"

जब उसका पति डाकुओं के पास गया हुआ था सराय के मालिक की पत्नी राजकुमारी के पास गई। उसने उससे कहा—"आप इस मनहूस जगह पर क्यों आई हैं! मेरा पति जंगली डाकुओं के गिरोह में है। कुछ दिन पहिले यहाँ एक युवक नौकर-चाकरों के साथ आया। यहीं ठहरा। आधी रात के समय डाकू आये सब कुछ लूट लाटकर, सबको मारकर वे चले गये। पर न मालूम यह भी कितनी अजीब बात थी कि बहुत खोज की, पर उस युवक का शव कहीं न मिला।"

उसकी बातें सुनकर, राजकुमारी ने अनुमान किया कि वह युवक अवश्य साईमन ही होगा। क्योंकि वह जीता बचकर कहीं निकल गया होगा इसलिए उसका शव न मिला होगा, यह सोचकर राजकुमारी ने सराय की मालकिन से कहा—"यह बताओ, आधी रात के समय मैं और मेरे दास-दासियाँ कहाँ जा सकते हैं! जो होना है, वह होकर रहेगा ही। हम यह रात यहीं काटेंगी।"

फिर राजकुमारी ने अपने सैनिकों को बुलाकर कहा—"रात के समय डाकू आयेंगे। तुम हथियार लेकर तैयार रहो, तुम यह दिखाओ कि सो रहे हो, पर भूलकर भी न सोना।"

भोजन के बाद सबने यह बहाना किया कि वे सो रहे थे। आधी रात के समय डाकू आये। उनके सराय में घुसते ही राजकुमारी के सैनिकों ने उन पर हमला किया। उन्होंने बारह डाकुओं और उनके सहायक सराय के मालिक को मार दिया।

अगले दिन सबेरे सराय की मालकिन को साथ लेकर, राजकुमारी ने फिर अपनी यात्रा शुरु की। वे जल्दी ही साईमन के गाँव में पहुँचे।

चरागाह में साईमन भेड़-बकरियाँ चरा रहा था। उसने दूरी पर राजकुमारी को आता देखा। वह बकरियों के सींगों पर मालायें लपेट कर, बाँसुरी बजाता राजकुमारी को लिवा लेने के लिए गया। बकरियाँ उसके गायन से ताल मिलाती चलीं। यह आश्चर्य देखने के लिए गाँववाले जमा हो गये।

राजकुमारी ने बकरियों के साथ साईमन को आता देख, उसे पहिचान लिया। साईमन ने बकरियों को रोका। उसने उनसे राजकुमारी को सलामी दिल्वाई। राजकुमारी के साथ जो आये थे, वे इतना हँसे कि घोड़ों पर से गिर भी पड़े। इस प्रदर्शन के समाप्त होने पर राजकुमारी के सैनिकों ने उस चरागाह में ही डेरे डाल दिये। साईमन भेड़-बकरियों को गाँव में हाँक ले गया। राजकुमारी ने उसके पिता की सराय में आकर, रहने की जगह माँगी।

साईमन के पिता ने राजकुमारी को देखते ही साष्टाङ्ग नमस्कार करके कहा कि उसकी सराय, राजकुमारियों के ठहरने के योग्य न थी। राजकुमारी ने देखा कि उसकी शक्ल सूरत भी साईमन की तरह थी। क्योंकि राजकुमारी हठ कर रही थी, इसलिए उसे मानना ही पड़ा।

राजकुमारी ने उससे कहा—"मुझे वह बकरी चरानेवाला नौकर के तौर पर चाहिए। वह जब मेरे पिताजी के यहाँ काम करता था, उसका व्यवहार सन्तोषजनक रहा।"

"वह! वह बिल्कुल मूर्ख है। नलायक, वह आप की सेवा नहीं कर सकता। वह जब इस बार आपके पिता के यहाँ काम करने आये, तो काम तो आप दीजिए ही नहीं, बल्कि पीट-पीटकर उसकी हड्डी पसली तुड़वा दीजिये।" साईमन के पिता ने कहा।

"जब वह मुझे फिर दिखाई दिया, तो मैं बड़ी खुशी हुई।" राजकुमारी ने कहा।

और क्या करता, साईमन के पिता ने उसको राजकुमारी की सेवा करने के लिए नियुक्त किया। जब उस दिन रात को राजकुमारी भोजन के लिए बैठी, तो साईमन ने स्वयं भोजन परोसा। जब वह परोस रहा था, तो उसके हाथ से चीनी के बर्तन गिरे और टुकड़े-टुकड़े हो गये। राजकुमारी बुरी तरह हँसी। साईमन के पिता ने उसे बुरी तरह डाँटा फटकारा।

अगले दिन सवेरे मुँह धोने के लिए गरम पानी, राजकुमारी ने साईमन के हाथ भिजवाने के लिए कहा। गरम पानी लेकर साईमन के आते ही राजकुमारी ने कमरा बन्द कर लिया और उसको वह राजाओं की पोषाक पहिनाई, जो वह साथ लायी थी। फिर वह साईमन का हाथ पकड़कर, उसके माता-पिता के पास गई। साईमन के पिता ने पहिले उनको देखकर साष्टांग करना चाहा। परन्तु राजकुमारी ने इस बीच कहा—"आप ही अपने लड़के को पहिचान नहीं पाये!"

साईमन ने सिर उठाकर देखा, वह हैरान रह गया। "यह तो सच है कि हुजूर की शक्ल सूरत मेरे लड़के की सी है, परन्तु मेरा लड़का तो इतना बड़ा नहीं है।"

पिता को हैरान देखकर, साईमन ने जो कुछ गुज़रा था, सुनाया। पिता ने सब सुनकर, लड़के का हाथ पकड़कर माफ़ी माँगनी चाही।

फिर साईमन उसको माँ-बाप को साथ लेकर, राजकुमारी अपने देश चली गई। वहाँ साईमन का विवाह धूमधाम से राजकुमारी के साथ हुआ। उसके बाद वे सुखपूर्वक रहने लगे।

खलीफ़ा की आँख खुली

खलीफ़ा हरून अल रशीद को यह अभिमान था कि उस जैसा उदार और दानी संसार में कोई और न होगा। एक बार उसने अपने वज़ीर जाफ़र के सामने अपनी धन-सम्पत्ति के बारे में शेखी मारी। उसने यह भी कहा कि चाहे कोई कुछ भी माँगे, वह दे सकता था। खलीफ़ा यह बिल्कुल भूल गया था कि भगवान की कृपा से उसको धन दौलत, पद-वैभव, ऐश्वर्य मिले हुए थे।

जाफ़र को खलीफ़ा की बातें कुछ अखरीं। उसने खलीफ़ा से कहा—"हुज़ूर, आप बुरा न मानें, जो यह गुलाम कहने जा रहा है। खुदा को याद करके ज़िन्दगी बसर करना ही ठीक है। इहलौकिक सुख सद्गुण, धार्मिकता, सब ईश्वर के अनुग्रह पर ही मिलते हैं। जिनको ये मिलते हैं, उनके घमंड दिखाने का कोई मतलब नहीं है। पेड़ अपने फलों को देखकर घमंड नहीं करते। आपकी शोहरत करनेवाले लोग हैं। आपका अच्छा शासन देखकर वे आनन्दित होंगे। आप यह न सोचिये कि अल्लाह ने आप अकेले को ही सम्पदा-सम्पत्ति दी है। बसरा शहर में एक साधारण आदमी है। उसके पास इतनी धन-दौलत है कि किसी के लिए उसका हिसाब करना भी सम्भव नहीं है। उसका नाम अबू अल कासीम है। आप भी उसकी तुलना नहीं कर सकते। वह बहुत सम्पन्न है।"

यह सुनते ही खलीफ़ा का मुँह लाल हो गया। उसने क्रुद्ध होकर कहा—"नीच कहीं के, तुम इतना झूठ बोल रहे हो कि तुम्हारी जान ली जा सकती है। जानते हो यह!"

अशोक कुमार

"मेरी बात में रत्ती भर भी झूट नहीं है। मैं हुज़ूर की कसम खाकर कहता हूँ। मैं जब बसरा गया था, तो मैंने स्वयं अबू अल कासीम का आतिथ्य पाया था। अगर आपको मेरी बातों पर यकीन न हो, तो आप किसी को भेजकर सच मालूम कर सकते हैं।" वज़ीर जाफ़र ने कहा।

खलीफ़ा और खौल उठा। उसने अपने सिपाहियों को बुलाकर जाफ़र को कैद में डलवा दिया। तमतमाता वह अपनी पत्नी जुबेदा के पास गया। उसके हाव-भाव देखकर जुबेदा ने उससे पूछा कि क्या हुआ था। खलीफ़ा ने बताया कि कैसे जाफ़र ने उसका अपमान किया था। उसने कहा है कि कोई बेनाम का मामूली आदमी मुझसे अधिक धनी है, मुझसे बढ़ा दानी है। मैं उस जाफ़र का सिर कटवा दूँगा।" खलीफ़ा ने कहा।

"जल्दबाजी न कीजिये। किसी को बसरा भेजिये। जब जाफ़र की बात झूटी साबित हो जाये, तभी उसका सिर कटवा देना।" जुबेदा ने खलीफ़ा को शान्त किया।

"किसी और को क्यों भेजा जाये? मैं ही हो आऊँगा।" खलीफ़ा ने कहा।

वह एक व्यापारी का वेष पहिनकर बगदाद से निकला। बसरा के रास्ते में एक सराय में ठहरा। सराय के पहरेदार से उसने अबू अल कासीम के बारे में कई प्रश्न किये।

"हुज़ूर, उसकी तारीफ़ करने के लिए सौ मुँह भी काफ़ी न होंगे। मैं एक मुँह से भला क्या कह सकूँगा?" पहरेदार ने कहा।

खलीफ़ा ने उस दिन रात को सराय में आराम किया। अगले दिन सवेरे कासीम के घर के बारे में पूछता वह निकल पड़ा।

यह सोचकर कि जो अबू अल कासीम का घर नहीं जानता है, वह बहुत दूर से आ रहा होगा, कोई परदेसी होगा। कोई उसको कासीम के घर सामने छोड़ गया।

यह मालूम होते ही कि कोई व्यापारी बगदाद से आया है, अबू अल कासीम बाहर आया। अतिथि का स्वागत करके उसको अन्दर ले गया। कासीम का घर बाहर से ही बहुत सुन्दर मालूम होता था। अन्दर तो स्वर्ग-सा लगता था। उस घर में काम करनेवाली दासियाँ भी बड़ी सुन्दर थीं। वे कासीम के लिए अंगूरी शराब और फल लाईं। वे जिन पात्रों में ये लाईं, वे भी बड़े अमूल्य थे।

फिर अतिथि और गृहस्थी भोजन के लिए बैठे। खलीफ़ा ने कभी उतना स्वादिष्ट भोजन नहीं खाया था। भोजन के बाद गायकों ने आकर गायन किया। खलीफ़ा के यहाँ बहुत-से गवय्ये थे, परन्तु जितना मीठा स्वर इन गायकों का था, उतना मीठा उसने कहीं न सुना था। यह भी खलीफ़ा को मालूम हो गया।

खलीफ़ा जब गाना सुनने में मस्त था, तो कासीम वहाँ से अन्दर गया और एक

हाथ में एक छड़ी और दूसरे में एक छोटा-सा पेड़ लेकर आया। उसका तना चान्दी का बना था। उस पर हरे पत्ते और फल भी लगे हुए थे। कासीम ने उस पेड़ को अतिथि के सामने रखा। खलीफ़ा ने उस समय पेड़ पर सोने का मोर देखा। उस मोर को बड़ा सुन्दर बनाया गया था।

कासीम का मोर के सिर पर एक छड़ी का रखना था कि पंख खोल पूँछ फैलाकर ज़ोर से घूमने लगा। वह इस तरह घूमते मोर के शरीर के छेदों में से अगर

बत्ती, अन्य सुगन्धित द्रव्यों की सुगन्ध आने लगी और सारे कमरे में व्याप्त हो गई। वह सुगन्ध भी विचित्र थी।

खलीफ़ा इस विनोद में मस्त हो गया। वह मस्त हो, उस मोर को देख रहा था कि कासीम झट उस पेड़ को दूर ले गया।

खलीफ़ा झुंझलाया—"अरे यह क्या बेअदबी है! जो आतिथ्य दे रहा हो, क्या उसके लिए ऐसा करना ठीक है! जो इतनी भी तमीज़ नहीं रखता है, उसके जाफ़र ने तारीफ़ के पुल बाँध दिये! शायद यह पागल इसलिए तो नहीं घबरा गया है कि कहीं मैं वह पेड़ न मांग बैठूँ! अच्छा हुआ कि मैं इसकी उदारता की परीक्षा के लिए स्वयं आया।"

इतने में कासीम वापिस आ गया। उसके साथ एक गुलाम लड़का भी था। उस लड़के के हाथ में शराब का एक प्याला था। उसे हीरों से बनाया गया था। उसमें बढ़िया शराब थी। कासीम ने वह प्याला खलीफ़ा को दिया। खलीफ़ा ने शराब पीली, प्याला वापिस देते हुए उसने देखा कि प्याला शराब से भरा हुआ था। वह चकित हो उठा। उसने फिर उसे दिया, फिर उसने देखा कि प्याला भरा हुआ था।

इस अक्षय सुरा पात्र को देखकर खलीफ़ा मोर की बात ही भूल गया। "यह कैसे सम्भव है!" उसने कासीम से पूछा।

"इसे एक बड़े सिद्ध पुरुष ने तैयार किया है।" कहते हुए कासीम ने सुरापात्र लड़के को दिया और उसे साथ लेकर जल्दी जल्दी परली तरफ़ वह चला गया।

इस बार खलीफ़ा को बड़ा गुस्सा आया। "यह युवक कोई मूर्ख होगा। नहीं तो कोई पशु होगा। नहीं तो क्यों जो कुछ

उसके पास है एक एक करके दिखा रहा है और मैं उन्हें अभी ठीक तरह देख भी नहीं पाता हूँ कि वह बेअदबी से ले जाता है। जाफ़र के दिन अच्छे नहीं हैं। उसे जरूर सज़ा दूँगा।" उसने मन ही मन सोचा।

इतने में कासीम एक बहुत ही सुन्दर दासी को लाया। उसकी पोषाक में सब जगह हीरे जवाहरात जड़े हुए थे। उस लड़की ने किसी साज को बजाते चौबीस गाने गाये। उस लड़की को देख, उसका गाना सुन खलीफ़ा मुग्ध हो गया। उस तन्मयता में खलीफ़ा मोर, सुरापात्र आदि सब भूल गया और उसने कासीम से कहा—"अरे किस्मत है, तो तुम्हारी है।"

यह बात उसके कान में पड़ते ही, कासीम उस लड़की को लेकर जल्दी जल्दी चला गया।

इस बार खलीफ़ा को बड़ा गुस्सा आया। यह सोच कि यदि वह यहाँ रहा, तो न जाने क्या कर बैठे, उसने कासीम के आते ही कहा—"मैं आपके आतिथ्य के लिए बहुत कृतज्ञ हूँ। अब मुझे घर जाने की इजाज़त दीजिये।"

कासीम ने अपने अतिथि को अकेला न छोड़ना चाहा, वह उसको ड्योढ़ी तक ले गया। खलीफ़ा सराय तक पैदल आया—"यह तो बिल्कुल दिखाऊ, धोखेबाज मालूम होता है। बस, जो कुछ पास है दिखाने के लिए ही हमेशा यह उतावला रहता है। तिसपर कंजूस है। इसमें तनिक भी शान नहीं है। झूट बोला है, इसलिए जाफ़र भुगतेगा ही।"

यह सोचता जब खलीफ़ा सराय के आवरण में आया तो उसने अर्ध चन्द्राकार में दासियों को दूर तक खड़ा पाया। उनके बीच वह सुन्दर लड़की भी थी, जिसने गाया था। उसके एक तरफ़ सुरापात्र पकड़कर एक लड़का और दूसरी ओर मयूर वृक्ष को पकड़े हुए दूसरा लड़का था।

खलीफ़ा के पास आते ही दासियों ने उसके सामने साष्टाङ्ग नमस्कार किया। उठकर उन्होंने उसको एक कागज दिया। उस पर कासीम ने अपने अतिथि को सम्बोधित करके इस प्रकार लिखा था:—

"उस अतिथि से जिनके आगमन ने मेरे घर को पवित्र कर दिया, मेरी यह प्रार्थना है, जो उपहार मैंने भक्तिपूर्वक भेजे हैं, उनको कृपया स्वीकार कीजिये। क्योंकि इन उपहारों ने आपका मन उल्लसित किया था, उन्हें आप अपना ही समझेंगे, यह सोचने का दुस्साहस कर रहा हूँ।"

यह पत्र देखते ही खलीफ़ा का सिर चकरा गया। क्या मैंने कभी ऐसी शान दिखाई थी! क्या यह मेरे लिए सम्भव है! कभी सम्भव नहीं है। इस युवक के बारे में यूँ ही सन्देह हुआ। जो कुछ जाफ़र ने इसके बारे में कहा था, उसमें कतई भी झूट नहीं है," खलीफ़ा ने सोचा।

(अभी है)

राम, लक्ष्मण को साथ लेकर, विश्वामित्र, ईशान्य दिशा की ओर गये। वे उस जगह पहुँचे जहाँ महाराजा जनक यज्ञ कर रहे थे। यज्ञशाला के चारों ओर ऋषिओं के निवास थे। विश्वामित्र ने भी अपने लिए एक जगह रहने की व्यवस्था की।

इस बीच महाराजा जनक को पता लगा कि विश्वामित्र आये हुए थे। वे अपने पुरोहित शतानन्द के साथ आये। उन्होंने अर्घ्य आदि से विश्वामित्र की पूजा की।

महाराजा जनक ने विश्वामित्र से कहा कि उनके यज्ञ पूरा होने में अभी बारह दिन थे। राम और लक्ष्मण को देखकर उन्होंने पूछा—"ये राजकुमार कौन हैं? किनके लड़के हैं?"

विश्वामित्र ने जनक से राम और लक्ष्मण का परिचय करवाया—"आपके पास जो धनुष है, उस पर बाण चढ़ाना सम्भव है कि नहीं, यह देखने के लिए मुख्यतः ये बच्चे यहाँ आये हैं।"

जनक का पुरोहित, शतानन्द, अहल्या और गौतम का बड़ा लड़का था। शतानन्द को यह जान बड़ी खुशी हुई कि राम के कारण उसकी माता शाप मुक्त हो गई थी और उसके पिता, जिन्होंने उसको शाप दिया था, आश्रम में वापिस आ गये थे।

उसने राम की ओर मुड़कर कहा—"आप विश्वामित्र का अनुग्रह प्राप्त करके धन्य हैं। इस महापुरुष का जीवन वृत्तान्त सुनाता हूँ, सुनिये। वहाँ उपस्थित लोगों के समक्ष वह विश्वामित्र का जीवन वृत्तान्त यों सुन ने लगा—

"ब्रह्मा के कुश नाम का लड़का हुआ। उसके कुशनाभ नाम का पुत्र हुआ। कुशनाभ के लड़के गाधि के लड़के विश्वामित्र थे। उन्होंने बहुत समय तक राज्य किया। उस समय एक अक्षौहिणी सेना लेकर पर्यटन करते करते वे महामुनि वशिष्ठ के आश्रम में पहुँचे। उस आश्रम में कितने ही तपस्वी थे। वह आश्रम ब्रह्मलोक का एक भाग-सा प्रतीत होता था।"

आश्रम में आये हुए विश्वामित्र आदि का, वशिष्ठ ने आतिथ्य-सत्कार किया। दोनों ने एक दूसरे से कुशल प्रश्न किये। थोड़ी देर तक इधर उधर की बातें होती रहीं। फिर वशिष्ठ ने कहा कि विश्वामित्र और उनके साथ आये हुए सैनिकों को सहभोज देंगे।

"आपका दर्शन ही हमारे लिए सहभोज है और किसी सहभोज की क्या आवश्यकता है!" कहते हुए विश्वामित्र वहाँ से चल पड़े।

परन्तु वशिष्ठ ने उनको जाने से रोका। शबल नामक कामधेनु को बुलाकर, उससे कहा—"भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, पानीयों के साथ सब के लिए षड्रसोपेत भोजन की व्यवस्था करो।" शबल ने वैसा ही किया।

विश्वामित्र वह दावत खाकर बड़े खुश हुए "महर्षि, मुझे शबल दिलवाइये। इसके बदले में आपको लाख गौवें दूँगा। क्योंकि श्रेष्ठ वस्तुयें राजा की होती हैं, अतः वस्तुतः यह गौ मेरी ही होनी चाहिये।" उन्होंने कहा।

"आप चाहें सौ करोड़ गौवें दें, मैं शबल नहीं दूँगा। यही तो मेरा धन है। हमारा सारा आश्रम इसी पर निर्भर है।" वशिष्ठ ने कहा।

विश्वामित्र ने कहा जितना वशिष्ठ सोना माँगेंगे, उतना वे देंगे। जितने हीरे माँगेंगे, उतना देंगे। जैसे भी हो उन्होंने शबल देने के लिए कहा, पर वशिष्ठ ने देने से इनकार कर दिया।

तब विश्वामित्र ने जबर्दस्ती शबल को ले जाने का प्रयत्न किया, शबल रम्भाती आँसू बहाती, वशिष्ठ के पैरों पर आकर पड़ी—"यह क्या अन्याय है!" उसने पूछा।

वशिष्ठ ने शबल से कहा—"विश्वामित्र के पास अक्षौहिणी सेना है, मेरे पास बल नहीं है, मैं क्या कर सकता हूँ!"

"आपकी तपःशक्ति के सामने इन विश्वामित्र की क्या शक्ति है! इनकी सेना का संहार करने के लिए मैं सेना की सृष्टि करती हूँ, आज्ञा दीजिये।"

कामधेनु रम्भा रही थी कि अनन्त पह्लव, म्लेच्छ, पैदा होने लगे और विश्वामित्र की सेना का संहार करने लगे।
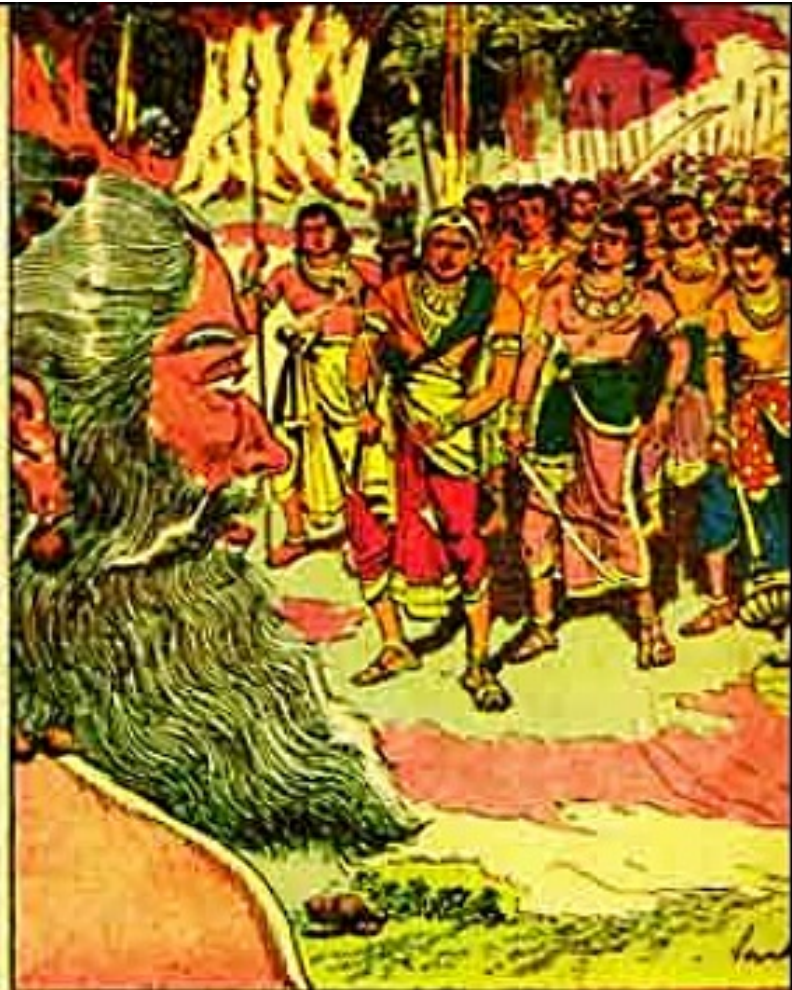
विश्वामित्र रथ पर सवार हो गये और जो दिव्यास्त्र उनके पास थे, वे उनका इन पर उपयोग करने लगे। कामधेनु शक, काम्बोज, हरीत, किरात की सृष्टि करती गई। वे विश्वामित्र की सेना को घेरने लगे।

यह देख विश्वामित्र के सौ लड़कों ने शस्त्र लेकर वशिष्ठ पर हमला किया। उनके एक बार हुँकार करने से सौ लड़के वहीं भस्म हो गये। उनकी सारी सेना समाप्त हो गई, विश्वामित्र बड़ा अपमानित हुए। उनकी हालत पंख कटे पक्षी की-सी हो गई।

जो मरने से बच गया था, उस लड़के को राज्य भार सौंपकर वे हिमालय में चले गये और वहाँ शिव के लिए तपस्या करने लगे।

कुछ दिन बाद शिव प्रत्यक्ष हुए। उन्होंने पूछा कि क्या चाहिये था। "मुझे ऐसे अस्त्र दो जिनसे देवता, गन्धर्व, राक्षस आदि, सब मेरे आधीन हो सकें। मुझे धनुर्वेद का पूर्ण ज्ञान हो" विश्वामित्र ने कहा।

शिव "तथास्तु" कहकर अन्तर्धान हो गये।

इन अस्त्रों को लेकर विश्वामित्र वशिष्ठ को नाश करने के लिए निकल पड़े। वे वशिष्ठ आश्रम में गये। उन्होंने आश्रम का दहन प्रारम्भ किया। वहाँ के ऋषि इधर उधर भागने लगे। पक्षी और पशु भाग निकले। क्षण में आश्रम शून्य-सा हो गया।

वशिष्ठ क्रुद्ध हो, अपना ब्रह्मदण्ड लेकर विश्वामित्र के सामने आये। विश्वामित्र ने आग्नेय अस्त्र का उपयोग किया। परन्तु वह ब्रह्मदण्ड को छूते ही ठण्डा पड़ गया।

विश्वामित्र ने कई सैकड़ों अस्त्रों का उपयोग किया, परन्तु वशिष्ठ के ब्रह्मदण्ड ने सब को निगल लिया। वशिष्ठ और उनके ब्रह्मदण्ड से ज्वालायें निकल रही थीं, अंगारे निकल रहे थे।

दूसरे मुनियों ने वशिष्ठ के पास आकर कहा—"आपने विश्वामित्र को जीत लिया है, अब शान्त होईये।"

"ब्रह्मतेज के सामने क्षत्रिय बल कितना है! मैं तपस्या करके ब्रह्मत्व प्राप्त करूँगा।" यह सोचकर विश्वामित्र पत्नी को लेकर कठिन तपस्या करने के लिए दक्षिण दिशा की ओर निकल पड़े। उस समय उनके
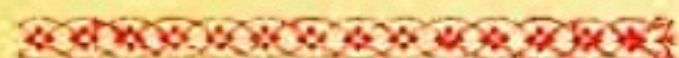
हविष्यन्द, मधुश्चन्द, दृढ़नेत्र, और महारथ नाम के चार लड़के हुए।

कुछ समय बाद ब्रह्मा ने प्रत्यक्ष होकर विश्वामित्र से कहा—"तुम्हारी तपस्या के कारण अब राजाओं का संसार तुम्हारे आधीन है। तुम राजर्षि कहलाये जाओगे।"

राजर्षि उपाधि से विश्वामित्र सन्तुष्ट नहीं हुए। वे तो ब्रह्मर्षि कहलाना चाहते थे। इसलिए उन्होंने फिर तपस्या प्रारम्भ की।

इसी समय ईक्ष्वाकु वंश के राजा त्रिशंकु ने सशरीर स्वर्ग जाना चाहा, जब उन्होंने इस इच्छा के बारे में अपने कुल गुरु से कहा तो उन्होंने कहा कि यह असम्भव था।

यह सोचकर कि वशिष्ठ के लड़के, जो दक्षिण में रह रहे थे, शायद उसकी सहायता कर सकें, वह उनके पास गया। उन्होंने क्रुद्ध होकर उसको वापिस चले जाने के लिए कहा। इस पर भी त्रिशंकु बाज़ न आया, उसने कहा कि वह किसी और की शरण लेगा। वशिष्ठ के सौओं लड़के क्रुद्ध हो उठे, उन्होंने शाप दिया कि वह चाण्डाल हो जाये।

शाप के कारण वह काला हो गया। उसके कपड़े भी काले हो गये। उसके गहने भी लोहे के हो गये। वह वशिष्ठ के शत्रु विश्वामित्र के पास गया। विश्वामित्र ने त्रिशंकु का कहना सुनकर कहा—"मैं तुम्हें इसी आकार में स्वर्ग पहुँचा दूँगा।" उन्होंने यज्ञ की योजना की और अपने शिष्यों को, ऋषियों को बुलाकर लाने के लिए कहा।

निमन्त्रण पाकर सब आये, पर महोदय और विश्वामित्र के लड़के न आये। जो न आये थे, उनको विश्वामित्र ने शाप दिया।

यज्ञ आरम्भ हुआ। परन्तु हवि लेने के लिए देवता न आये। विश्वामित्र क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने त्रिशंकु से कहा—"मैंने इतने समय जो तपस्या की है, उसके बल पर ही तुम्हें स्वर्ग भेजूँगा।" सब मुनि देख रहे थे कि त्रिशंकु सशरीर ऊपर उठा और स्वर्ग की ओर चल पड़ा।

परन्तु इन्द्र आदि देवताओं ने त्रिशंकु को स्वर्ग में न आने दिया। उसे नीचे गिरा दिया। त्रिशंकु सिर के बल गिरते हुए चिल्लाया—"महात्मा, रक्षा करो।" विश्वामित्र ने कोप में दक्षिण दिशा में एक और सप्तर्षि मंडल बनाया। कुछ नये ग्रह बनाये। "मैं एक और स्वर्ग और नये देवताओं को बनाऊँगा।" उन्होंने कहा।

तब देवता और ऋषि घबरा गये। उन्होंने विश्वामित्र के पास आकर कहा—"महाशय, शापग्रस्त त्रिशंकु को स्वर्ग में कैसे रखा जा सकता है!"

"मैंने वचन दिया है कि मैं सशरीर इसको स्वर्ग भेजूँगा। वह होकर रहेगा।" विश्वामित्र ने कहा।

फिर यों सन्धि हुई कि त्रिशंकु नव निर्मित नक्षत्रों में हमेशा सिर नीचे किये पड़ा रहे और विश्वामित्र नये देवताओं की सृष्टि न करें।

फिर विश्वामित्र दक्षिण दिशा छोड़कर, पश्चिम की ओर पुष्कर नाम के तपोवन के पास तपस्या करने लगे।

इस बीच अयोध्या में अम्बरीश महाराजा ने एक यज्ञ प्रारम्भ किया और इन्द्र यज्ञ पशु को उठा ले गया। राज-पुरोहित ने राजा से कहा कि कुछ भी हो यज्ञ पशु को खोजना होगा, नहीं तो नर की बलि देनी पड़ेगी। जब अम्बरीश को यज्ञ पशु न मिला, तो वह नर के लिए निकला।

भृगातुद नामक पर्वत प्रदेश में ऋचीक नाम का मुनि अपनी पत्नी और बच्चों के साथ रह रहा था। अम्बरीश ने उसके पास जाकर अपनी कहानी सुनाई। "मैं लाख गौवें दूँगा, तुम अपने लड़कों में से एक को बलि के लिए दो।" ऋचीक ने कहा कि वह बड़ा लड़का न देगा। उसकी पत्नी ने कहा कि वह अन्तिम लड़का न देगी। मँझले का नाम शुनश्शेप था। उसने राजा से कहा—"कहने की जरूरत नहीं कि मेरे माँ-बाप मुझे बेचने के लिए तैयार हैं। मुझे ले जाइये।"

अम्बरीश शुनश्शेप को लेकर, कड़ी दुपहरी में लू का मारा, विश्वामित्र के आश्रम में पहुँचा। शुनश्शेप विश्वामित्र को देखते ही उनकी गोद में जा गिरा। उसने अपनी सारी कहानी सुनाई और प्रार्थना की कि उसकी रक्षा करें।

विश्वामित्र उसको देखकर पसीजे। उन्होंने अपने चारों लड़कों को देखकर कहा—"तुम इसके बदले बलि के लिए जाओ और इसकी रक्षा करो।" उन्होंने पिता की आज्ञा की परवाह न की और जाने से इनकार कर दिया। विश्वामित्र को गुस्सा आ गया, उन्होंने उनको भी उसी तरह शाप दिया, जिस तरह वशिष्ट के लड़कों को दिया था।

फिर विश्वामित्र ने शुनश्शेप को दो मन्त्र उपदेश में दिये—"जब तुम्हें बलि के लिए स्तम्भ से बाँध दें, तब तुम ये मन्त्र पढ़ना। अग्नि देवता प्रत्यक्ष होंगे।"

हुआ भी ऐसा ही। यज्ञ में शुनश्शेप पर लाल चन्दन पोता गया। उसे लाल कपड़े पहिनाये गये। दूब से उसे नीम के स्तम्भ से बाँध दिया। तब उसने मन में दो मन्त्र जपे। इन्द्र ने उसको दीर्घायु दी।

दिलवारा जैनालय

अरावली पर्वत पंक्ति में आबू है। वहां दिलवारा जैनालय है, जो बहुत प्रसिद्ध है। यह समुद्र की सतह से ४००० फीट ऊपर है। यह संगमरमर का बना है। मध्य युग की कला इसमें जगह जगह दृष्टिगोचर होती है।

इस आलय के बीच में एक वर्गाकार कक्ष है। इस में चतुर्मुख आदिनाथ की मूर्ति है। इसके उत्तर के मन्दिर में भी यही देवता प्रतिष्ठित है। पश्चिम में विमलशा का बनाया हुआ मन्दिर है, यह पार्श्वनाथालय है। इसके बगल के आलय में नेमिनाथ की मूर्ति है।

आबू में इन मन्दिरों के अतिरिक्त, हिन्दुओं के पवित्र पुण्य-स्थल भी काफ़ी है। यहाँ की प्राकृतिक शोभा भी प्रसिद्ध है। इसीलिए यात्री बड़ी संख्या में यहाँ आते हैं।

१. स्वर्णसिंह, धर्मशाला

आप "चन्दामामा" में जंगली जानवरों के स्वभाव आदि के बारे में भी कुछ क्यों नहीं देते?

जंगली जानवरों के बारे में बहुत-सी कहानियां छपी हैं, कहानियों में उनके स्वभाव पर प्रकाश डाला जा सकता है—अलग से कुछ देना इस बारे में अभी तो सम्भव नहीं है।

२. एस. नागराज और रमणीजी, हनुमान घाट, वाराणसी

क्या आप हर साल "चन्दामामा" का कैलेन्डर छापते हैं?

एक दो बार अवश्य छापा था, पर हम यह ज़रूरी तौर पर नहीं करते।

३. बन्सीलाल माध्यम, मद्रास

"चन्दामामा" का चन्दा मैं किस पते पर भेज सकता हूँ?

व्यवस्थापक "चन्दामामा" २-३, आर्कार्ट रोड, वडपलनी, मद्रास-२६

४. गिरीशचन्द्र गुप्ता, अलीगढ़

यदि मैं फ़ोटो परिचयोक्ति के लिए फ़ोटो भेजूं, तो आप उन्हें फ़ोटो परिचयोक्ति में प्रकाशित करेंगे या नहीं?

हां, यदि उपयुक्त होंगी, पर यहां यह भी कह दिया जाये कि हमारे पास बहुत-सी फ़ोटो आती रहती हैं और बहुत-सी जमा भी हैं।

५. जोधासिंह रावल, चौबरिया

क्या आप "चन्दामामा" के दीवाली अंक की तरह रामलीला अंक भी छाप सकते हैं?

अभी तो नहीं।

६. कुलदीपसिंह, नई दिल्ली

आप "चन्दामामा" में जासूसी कहानियाँ क्यों नहीं छापते?

क्योंकि हम इन्हें माँ-बच्चों के लिए उपयोगी नहीं समझते।

७. बलबीरसिंह, नई दिल्ली

मैंने मार्च १९५६ के चन्दामामा "समाचार वगैरह" में पढ़ा था, "अब वैज्ञानिकों का कहना है कि भूमि नाक की तरह है, यानि उतनी गोल नहीं जितनी नारंगी होती है, परन्तु अब अन्तरिक्ष यात्री गागारिन का कहना है कि पृथ्वी गोल है?"

हमने वैज्ञानिकों की बात कही थी, आप गागारिन की बात कह रहे हैं। अब अन्तरिक्ष में यात्री जाने लगे हैं, उनकी जानकारी पर सम्भव है कि बहुत-सी भूमि सम्बन्धी धारणायें गलत साबित हों। १९५९ की बात, सम्भव है, १९६२ तक पूर्णतः सत्य ही साबित हो, अथवा असत्य।

८. कृष्णकुमार, गया

क्या आप "पाठकों के मत" नामक स्तम्भ की पृष्ठ संख्या बढ़ाने की कृपा नहीं कर सकते?

अभी तो नहीं।

९. इन्द्रजीत मुखर्जी, पंचमढ़ी

गलीवर की यात्राओं की तरह क्या आप "अद्भुत देश में एलिस की कहानी" प्रकाशित करेंगे?

सम्भव है कि भविष्य में करें।

१०. नरेशकुमार सचदेव, चंडीगढ़

क्या आप "चन्दामामा" में झाँसी की रानी की कहानी प्रकाशित करने का कष्ट कर सकते हैं?

हां, कभी अवश्य करेंगे।

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत परिचयोक्ति

खेल का आनन्द दिल में!

प्रेषक: अशोक माहूरकर - जलगांव

Photo by B. Bhamali
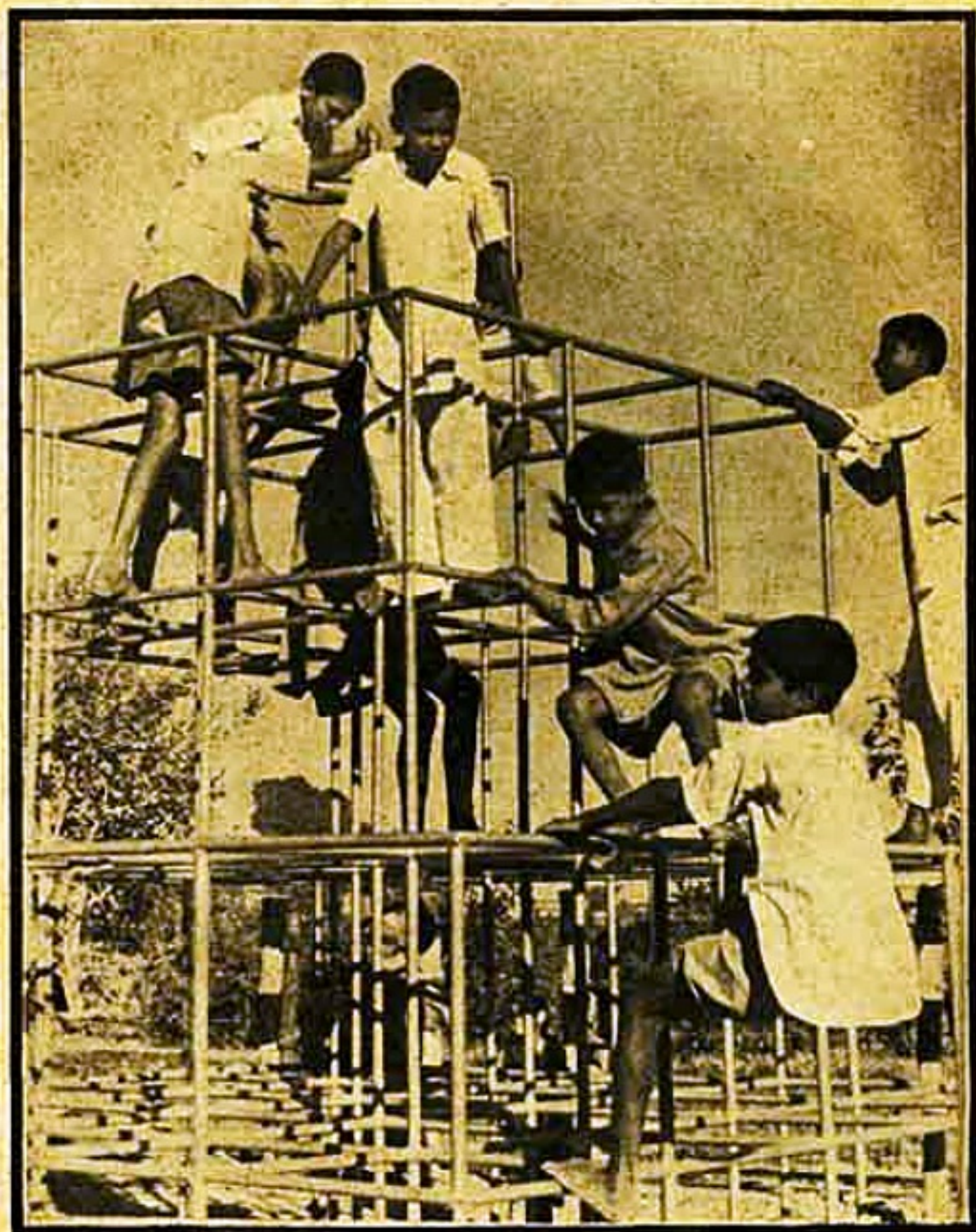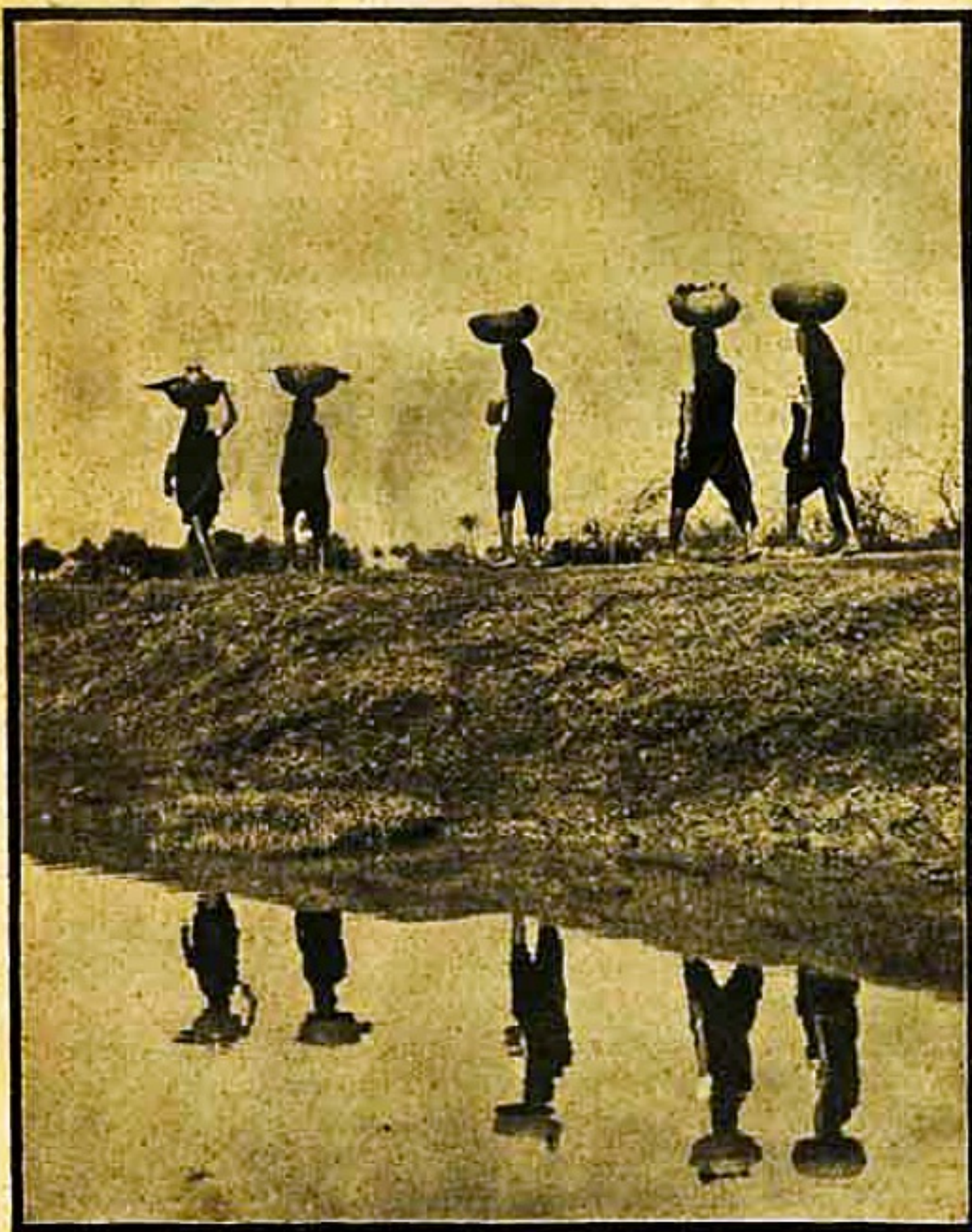
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

तन की छाया जल में !!

प्रेषक :
अशोक माहूरकर - जलगांव

अन्तिम पृष्ठ

शकुनि युद्ध-भूमि से इस तरह भागा कि अपने अश्वदल के साथ उसने धृष्टद्युम्न के पार्श्व पर आक्रमण किया। फिर से युद्ध ज्वालायें भभकने लगीं। शकुनि का अश्वदल का करीब करीब संहार हो गया। केवल सात सौ आश्विक ही बचे।

कौरव सेना जो समुद्र के समान थी, गौ के खुर के बराबर हो गई। अर्जुन ने उसका नाश कर दिया। जो सैनिक दोनों तरफ़ बच गये थे, उनमें भयंकर युद्ध हुआ। दुर्योधन को चोट लगी। वे रथ से गिर पड़ा और घोड़े पर सवार हो दूर गया।

वे तीनों और शकुनि एक जगह एकत्रित हुए। संजय को भी उन्होंने पाँचवा योद्धा बनाया। ये पाण्डवों से लड़ने लगे। सात्यकी ने उनका सामना किया। संजय को मूर्छित करके, उसने जीवित पकड़ लिया।

इधर धृतराष्ट्र के जो लड़के जीवित रह गये थे, उन्होंने भीम पर हमला किया। भीम ने उन सबको मार दिया। केवल सुदर्शन मात्र रह गया।

इस हालत में कृष्ण और अर्जुन ने शेष सेना की गिनती की। दुर्योधन की सेना में पाँच सौ घुड़सवार, दो सौ रथ, एक सौ हाथी, तीन हज़ार पदाति रह गये थे। योद्धाओं में दुर्योधन और सुदर्शन के अतिरिक्त, कृप, अश्वत्थामा, कृतवर्मा, सुशर्मा, शकुनि और उसका लड़का उलूक रह गये थे।

भीम और अर्जुन और सहदेव ने इन योद्धाओं का सामना किया। इस युद्ध में अर्जुन ने सुशर्मा को मार दिया। भीम ने सुदर्शन का गला काट दिया। सहदेव ने शकुनि और उलूक को मार दिया। दो घड़ियों में दुर्योधन की शेष सेना भी नष्ट कर दी गई।

अट्ठारहवें दिन महाभारत का युद्ध समाप्त हुआ। कौरव सेना के समाप्त होने के समय पाण्डवों की इतनी सेना रह गई थी, दो हज़ार रथ, सात सौ हाथी, पाँच सौ घोड़े, दस हज़ार पदाति।

धृष्टद्युम्न बचे हुए शत्रुओं को युद्ध भूमि में मारता आ रहा था कि उसने सात्यकी के साथ संजय को देखकर पूछा—"तो तुमने इसको क्यों पकड़ रखा है! मार दो।" सात्यकी संजय को मारनेवाला था कि व्यास ने आकर उसे छुड़वाया।

संजय अस्त्र और कवच निकालकर, नगर की ओर जा रहा था कि उसको एक पोखर के किनारे गदा लिये दुर्योधन दिखाई दिया। उसकी आँखों में तरी थी।

दुर्योधन ने संजय से मालूम किया कि कौरव पक्ष में केवल कृतवर्मा और अश्वत्थामा मात्र ही रह गये थे।

"अपराजित होकर मुझ जैसा व्यक्ति जीवित नहीं रह सकता। मेरे पिता से कहना कि मैं अभी जीवित हूँ।" कहता दुर्योधन पोखर में उतर गया।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

दिसम्बर १९६१ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७ अक्टूबर '६१ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता,
चन्दामामा प्रकाशन,
वडपलनी, मद्रास-२६

अक्टूबर - प्रतियोगिता - फल

अक्टूबर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : खेल का आनन्द दिल में !
दूसरा फ़ोटो : तन की छाया जल में !!

प्रेषक : अशोक माहूरकर
C/o श्री. तुकाराम रामभाऊ माहूरकर, सराफ़ बाजार, जलगाँव

चित्र-कथा

एक दिन दास और वास बाग की ओर जा रहे थे कि एक शरारती लड़का साईकल पर आया। "परसों तुम्हारे टाइगर ने मेरी साईकल का टायर खा लिया था। हरजाना कौन देगा!" "टाइगर से पूछो" दास और वास ने कहा। शरारती ने "टाइगर" को पकड़ने की कोशिश की, वह भाग गया। वह पीछे साईकल पर दौड़ा। टाइगर भागा भागा एक पेड़ की टहनी पर जा चढ़ा। शरारती उस रफ्तार में पेड़ के तने से जा टकराया। साईकल का पहिया दूर जा गिरा।

Printed by B. NAGI REDDI for the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

बसंती
LUX
नीला
LUX
LUX
गुलाबी
LUX
'मेरा मनपसंद
लक्स
इंद्रधनुष के
चार रंगों में
और सफ़ेद भी!'
वहीदा रेहमान
कहती हैं
LTS. 81-X29 HI
हिंदुस्तान लीवर का उत्पादन